संन्यासी

या

देश की आवाज़

[वीर-रस-प्रधान राष्ट्रीय नाटक]

—×—

लेखक

श्रीयुत् भगवतस्वरूप जी जैन 'भगवत'



प्रकाशक

श्री भगवत् - भवन,

एत्मादपुर (आगरा)

मूल्य—दस आना

सजिल्द—चौदह आना

प्रकाशक
श्री भगवत् भवन
ऐत्मादपुर (आगरा)

सुशीला-स्मृति सीरीज़
की चौथी भेंट

—पहलीबार—

प्राणों में ठण्डक भर देने वालीं और मनोमुग्ध कर
श्री भगवत् जी की चुनी हुई
कविताओं का संग्रह

चाँदनी

आँधी-बादलों को ठेलकर आशा है शीघ्र ही प्रगट
होने वाली है। दिल के एक कोने में इसका
इन्तज़ार भी करिये !

मई सन १९४२

मुद्रक—
बा० कपूरचन्द जी जैन,
महावीर प्रेस, आगरा

हाँ ! इससे मैं इन्कार नहीं करता कि नाटक लिखना आसान काम नहीं है ! प्रकृति के पुजारी और प्रतिभाशाली ही नाटक लिख सकते हैं ! उनका लिखा दृश्य-काव्य ही 'नाटक' कहा जा सकता है, यह सही है ! लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि निशा के श्याम-अंचल में दीप-द्युति द्वारा प्रकाश-किरणें प्रविष्ट न की जाएँ !

बस, इसी हृदय की कोमल-भावना पर प्रस्तुत पुस्तक की—मेरा आग्रह नहीं कि इसे आप नाटक कहें—नींव है ! आज से सात वर्ष पहिले जब 'समाज की आग' पुस्तक लिखी थी ! तभी से मन में एक भूख थी कि एक अभिनय पुस्तक और लिखूँ !

मैंने डरते-डरते क़लम उठाई ! और उस क़लम से जो कुछ लिखा गया—यह आपकी नज़र के आगे है ! मुझे कुछ नहीं कहना ! कहना है तो सिर्फ़ यह—कि कृपया इसमें विशुद्ध, और ऊँची हिन्दी देखने की आशा न करें ! लेखनी को पूरी आज़ादी बरतने का मौक़ा दिया गया है ! महज़ इसलिये कि अभिनय देखने वाली जनता को समान-रूप से रुचिकर हो ! और यह बात पुस्तक छपने से पेश्तर परख भी ली गई । स्थानीय ड्रामेटिक-क्लब ने इसे खेला, जनता ने आशा से अधिक प्रसन्नता और रुचि प्रगट की । लेकिन खेद यह रहा, कि अधिकारी वर्ग ने उत्तेजक कह कर बीच ही में रोक दिया । यों, इसे और भी लोगों की सहानुभूति मिली ।

अब शायद मुझे अधिकार है, कि अपनी पूर्व-पुस्तकों की तरह इसे भी अपनाने के लिये आपसे कहूँ ! साथ ही भूलों के लिये क्षमायाचना की रस्म को भी मैं अदा करना फ़र्ज़ समझता हूँ !

२२-१०-३६
विजयादशमी

आपका बन्धु—'भगवत्' जैन

पात्र-सूची

पुरुष-पात्र—	परिचय—
१—अजितसिंह…………	एक भोला राजा
२—रणधीरसिंह…………	राजा का चालाक वज़ीर
३—विजयसिंह…………	राज्य का एक जागीरदार
४—गुरुदेव…………	एक वृद्ध साधु
५—प्रकाश…………	नौजवान साधु, बाद को देश नेता
६—जंगली…………	राज्य का वफ़ादार दर्बान सिपाही
७—बेकार-युवक…………	निठल्ला ग्रेज्युएट
८—साधु-दल, जल्लाद,… पथिक, नक़ाबपोश वग़ैरह !	परिचय स्पष्ट

स्त्री-पात्र—	परिचय—
१—सुनीता…………	विजयसिंह की बेटी
२—सुधा…………	वेश्या
३—गायकाएँ…………	परिचय प्रगट

[उप पात्र, उप पात्रियाँ]

१—राम…………	मर्यादा पुरुषोत्तम राम
२—लक्ष्मण…………	प्राणप्रिय राम के अनुज
३—समरसिंह…………	चित्तौड़ का एक क्षत्री
४—विद्युल्लता…………	समरसिंह की प्रेमिका, क्षत्राणी

सैन्यासी

— या —

देश की आवाज़

[वीर-रस प्रधान, राष्ट्रीय-नाटक]

पहला अङ्क

पहला दृश्य

[सखी-मण्डल की सम्मिलित ईश प्रार्थना]

तू है दुख – हरण – हार…! तू…… है…… !
तेरी शान बे - शुमार !
पावत ऋषि, मुनि न पार !
तू अनूप, तू अरूप—
जगपति वर्जित — विकार ! तू…… है…… !१
सेवक तेरे भुवेश !
हरदो हमारे कलेश !
तू दयालु, तू कृपालु—
'भगवत्' पद नमस्कार !
तू…है…दुख, हरण हार !!२

(प्रस्थान)

दूसरा दृश्य

[स्थान—राजदर्बार ! महाराज अजितसिंह सिंहासन पर विराजे हैं। एक ओर टेबिल पर शराब की बोतलें, जाम, कलम-दावात काग़ज़ वग़ैरह रखे हैं ! समीप ही कुर्सी पर वज़ीर रणधीरसिंह, जागीरदार विजयसिंह बैठे हैं ।]

रणधीर०—(जाम देते हुए) एक जाम और लीजिए—महाराज !

अजित०—बस, रहने दीजिए वज़ीर साहिब ! बहुत पी चुका ! न अब होश बाकी है, न ख्वाहिश !

बुझा दी खाक कर दी आग दिल की, सुर्ख-पानी ने !
दिखाई अब नई-दुनियाँ, मुझे मस्ती की रानी ने !
हटाकर सल्तनत का बोझ सारा मेरे कन्धों से—
मुझे जन्नत में पहुँचाया तुम्हारी जाँ फिसानी ने !!

रणधीर—(सविनय) यह क्या कह रहे हैं ?—महाराज ! मुझ नाचीज़ फर्माबर्दार की शान में यह अल्फ़ाज़ ? एक वफ़ादार वज़ीर की हैसियत से जो मैं कर रहा हूँ, वह मेरा फ़र्ज़ है, कर्त्तव्य है ! (दूसरा जाम देते हुए) यह लीजिए ! राज-काज के झंझटों के लिए मैं हूँ आप नहीं ! राजा का कार्य आराम करना है ! इसलिए कि राज्य-पद तपस्या का फल होता है !

विजय०—(जोश के साथ) ग़लत ! वज़ीर साहिब ! आप महाराज को ग़लत रास्ते पर ले जा रहे हैं। राजा का कार्य आराम की जिन्दगी बिताना, दुनियावी रँगीनियों में मस्त होकर ज़ुल्मो-सितम ढाना, ग़रीब-प्रजा की पुकारों से बे-खबर हो जाना नहीं ! उसका कार्य है—देश की भलाई के लिए बड़ी-से-बड़ी कुर्बानी करना,

अपनी औलाद की तरह प्रजा का प्रेम के साथ पालन करना। और उसके दुख-दर्दों को सुनने वाली आदत को तरजीह देना! इसलिए कि राजा प्रजा का पिता होता है! उसकी रक्षा करना उसका कर्तव्य होता है।

रणधीर०—(गम्भीरता से) जागीरदार साहिब! मालूम होता है कि आपने नशा किया है। तभी महाराज के अपमान करने की ताक़त आजमाइश कर रहे हो! लेकिन याद रखिए, महाराज का अपमान हो, उसे मैं बर्दाश्त नहीं कर सकता! (महाराज को जाम देते हुए) लीजिए महाराज!

जागीरदार—(उपेक्षा से) अपमान?—महाराज का अपमान मैं कर रहा हूँ—या आप?—नशा मैंने किया है, या आपने?......आपकी आँखों पर स्वार्थ का चश्मा चढ़ा हुआ है, हृदय पर पाप की काली स्याही ने दखल जमा लिया है! इसीलिए ऐसा कह रहे हो वज़ीर साहिब!...ख़ुद सोचकर देखो—महाराज को शराब पिला-पिला कर उन्हें कर्तव्य से विमुख करना, उनके भोलेपन से नाजाइज़ फायदा उठाकर शासन को जुल्मी, अन्यायी और लम्पटी साबित करना, अपने को सल्तनत का वफ़ादार होने का दम भरते हुए भी विश्वासघात करने से बाज़ न आना, यह सब महाराज का अपमान कौन कर रहा है?...

रणधीर०—(क्रोध से) चुप रहो! ज्यादह बातें बनाकर मेरे क्रोध को न भड़काओ!

जागीर०—(शान्ति से) मुझे चुप करना चाहते हो वज़ीर साहिब ! तो चुप कीजिए केवल कहने भर से कभी कोई चुप नहीं हो सकता। चुप कीजिए। मेरे मुँह को आप बन्द कर सकते हैं। धमकी और राज्य-सत्ता के बल पर नहीं, मेरी बातों का जवाब देकर ! वरन् जब तक ज़ुल्म रहेंगे, उनके खिलाफ़ आवाज़ उठती ही रहेगी ! न, भूलो ! न भूलो वज़ीर साहिब ! अहंकार के नशे में अपना कर्तव्य, अपना फ़र्ज़ और अपनी ज़िम्मेदारी ! यह नशा शराब के नशे से भी खतरनाक, घातक और तकलीफ़ देह है !

भरा ख़ुदी का है रंग दिल में,
सुराही साक़ी लिए खड़ा है।
पनाह कैसे मिलेगी परवर !—
नशे के ऊपर नशा चढ़ा है ?

रणधीर०—(डपट कर) बस, बहुत सुन चुका ! सुनने की भी एक मियाद होती है। महाराज की ही रोटियाँ खाकर महाराज को नशेबाज़, अन्यायी, ज़ुल्मी, सितमगार कहते तुम्हें शर्म नहीं आती ?…

जागीर०—(दृढ़ता से) शर्म ?—शर्म आना चाहिए आपको। मैं नहीं समझता आप जब सुनने से घबड़ाते हैं, तो सुनने का काम क्यों नहीं छोड़ देते ? क्यों नहीं राज्य बर्बाद करने—हथिया लेने के—इरादे को बदल देते ? क्यों एक बेवफ़ा वज़ीर कहलाने के लिए प्रजा को मजबूर करते हैं ? सच्चे को कहने में शर्म नहीं, शांति मिलती है—वज़ीर साहिब ! और याद रखिए, झूँठ की पहिचान है—सुनने से घबड़ाना ! लेकिन मैं तुम्हारी

तरह महाराज की ही रोटियाँ खाकर महाराज के साथ विश्वासघात नहीं करता, उन्हें उनका सच्चा रास्ता बतलाने में कभी पीछे नहीं रहना चाहता ! (महाराज की ओर देखते हुए) चाहता हूँ, महाराज अपने साथ होने वाले विश्वास-घात से वाकिफ़ हो जाएं। चाहता हूँ, महाराज अपनी प्यारी-प्रजा की दर्दभरी आहों से बे-खबर न रहें। चाहता हूँ, सल्तनत की बागडोर तुम जैसे दुराचारियों के हाथ में न रहकर स्वयं महाराज के हाथों में पहुँच जाए। चाहता हूँ महाराज गुप्त षड्यन्त्रों की मंत्रणा से समय रहते खबरदार होजाएं।

महाराज—(भोलेपन के साथ) ठीक कह रहे हो जागीरदार साहिब ! मैं भी यही चाहता हूँ, कि अपनी सल्तनत में अमनोअमन की वारिश करने के लिए बादशाही-फ़र्ज़ पर ग़ौर करूं ? लेकिन वज़ीर साहिब की बोतल और जाम की बारिष मेरे सारे अरमानों को भिगोकर ही नहीं छोड़ती—गलाकर बर्बाद कर देती है।

वजीर—(झुँझलाकर स्वतः) उफ़् ! यह क्या हुआ जा रहा है ?

'किया था .खूने जिगर से जिसको,
आबाद, गुलशन उजड़ रहा है !
इधर बनाने की सोचता हूँ—
उधर बना भी बिगड़ रहा है !!'

(महाराज से) जहाँपनाह ! किधर ध्यान दे रहे हैं ? ......जागीरदार साहिब का मक़सद आपकी भलाई के लिये नहीं, बल्कि देश में बग़ावत की आग भड़काकर सल्तनत को नष्ट करने का है। जो महाराज के सामने ही इतनी बेअदबी से पेश आ सकता है, वह पीछे क्या

नहीं करता होगा ?...यह देश की हिमायत किसी राज़ से खाली नहीं, ग़ौर कीजियेगा, महाराज !'

महाराज—(भोलेपन के साथ) अच्छा ? यह बात है ? तो लाओ एक जाम और !

वजीर—(जाम देते हुए) बेशक यही बात है !

जागीर—(डपटकर) चुप रहो चाटुकार ! तुम जैसे नारकीय-कीट देश की भलाई, राजा की बहबूदी का क्या निर्णय कर सकते हैं। जो रातों दिन प्रजा की—ग़रीब-प्रजा की—बहू-बेटियों की इज्ज़त हड़प करने की ताक में बाज की तरह आँखें गढ़ाये रहते हैं ! जो जिस मालिक की बदौलत अपने को हिमालय की चोटी पर चढ़ा देख सकें, उसी की जड़ काट डालने में अहसान फ़रामोशी करते नहीं दहलाये ! देश की हिमायत वही कर सकता है, जिसके हृदय में देश के लिए जगह हो, दर्द हो, तुम नहीं !

वजीर—(खीज़कर) बस, बन्द करो अपनी ज़ुबान ! बहुत बढ़ चुके-जागीरदार साहिब ! ख़याल करना चाहिये—आप किसके आगे, क्या बातें कर रहे हैं ? जानते हो, इसका अन्जाम क्या हो सकता है ? आख़िर मुझे भी कुछ अधिकार है।

जागीर—(रोष के साथ) अधिकार ? न कहिए उसे अधिकार ! वह ज़ुल्म है, पशु-बल है ! अधिकार है मुझे—देश के बच्चे-बच्चे को अधिकार है, कि वह अधिकार की आड़ में छिपी रहने वाली—ख़ूँरेजी की ताकत का मज़बूती के साथ मुकाबिला करे। उसके ख़िलाफ़ जिहाद खड़ा करे, और अपने प्यारे राजा को सच्चा सरपरस्त—योग्य-

शासक होने का दुनिया में मौक़ा दे !...मैं जानता हूँ वज़ीर साहब ! मेरी सच्ची किन्तु कड़वी बातों का क्या नतीजा हो सकता है—सिर्फ़ मौत ! लेकिन मौत का डर मुझे सच्ची बातें महाराज के कान तक पहुँचाने से नहीं रोक सकता।

या तो .ज़ुल्मों का जहाँ से नाम ही टल जायगा !
या शहीदों की चिता से आस्माँ जल जायगा !!
या तो हथकड़ियाँ करेंगी देशभक्तों से दुलार !
या खुला होगा ज़माने भर को आज़ादी का द्वार !!
या तो संकट देश का मैं कर सकूँगा पाश-पाश !
या तुम्हारी ठोकरों में गिर पड़ेगी मेरी लाश !!

वज़ीर—(उपेक्षा की हँसी में) मौत ? मौत को हँसी न समझिए जागीरदार साहिब !...

मौत वह शै है जहाँ में जिसकी सानी का नहीं।
मौत से यों जूझ पड़ना काम आसानी का नहीं ॥
सख़्त मुश्किल, ख़ून दे देना वतन के वास्ते—
.ख़ून है वह .ख़ून है, है .ख़ून पानी का नहीं।

जागीर—(तीव्र-स्वर में) भूलते हो, भूलते हो ! भलाई और नेकी की राह में कदम रखने वाला कभी मौत से नहीं डरता ! उसका .ख़ून सेवा धर्म के लिए पानी बन जाता है !

वही पानी बुझाता है सितम, .ज़ुल्मों के शोलों को।
कि सेहत वह ही करता है ग़रीबों के फफोलों को ॥
वही पानी है जो चढ़ता है तलवारों की धारों पर—
रहम जिसने नहीं सीखा दिखाना गुनहगारों पर ॥

वजीर—(हँसकर) बहुत देख लिए, ख़ून को पानी की तरह बहाने वाले देश-भक्त! गर्ज-गर्ज कर रह जाने वाले बादल, दुनिया को झूँठी-आशा दिखा सकते हैं, डरा सकते हैं। लेकिन उसकी प्यास नहीं बुझा सकते! जागीरदार साहेब देश की वकालत कर, अपनी पद-मर्यादा को मिट्टी में न मिलाइए। ऐसा करना बुद्धिमानी न होगी।

जागीर—(गम्भीरता से) न हो बुद्धिमानी! अगर देश-द्रोही बन कर मुझे इससे भी अधिक गौरव मिले, आपकी नजरों में बुद्धिमान बनूँ, तो वह मुझे मंजूर नहीं। मैं मूर्ख की तरह देश के नाम पर—धर्म की समर-भूमि में हँसते-हँसते प्राण चढ़ाने को ज्यादह पसन्द करता हूँ!...... वजीर साहिब! आप नहीं, समझ सकते कि धर्म और देश क्या चीजें हैं? आपकी आत्मा को दुराचारों की स्याही ने काला कर दिया है, आपकी समझ को स्वार्थ की चादर ने ढाँक रखा है। भोले महाराज को अपनी चालों में फंसाकर सिंहासन अपने क़ब्ज़े में कर लेने की बदनीयती ने तुम्हें पागल बना दिया है। लेकिन याद रखिये—जब तक एक भी देश का सच्चा-सेवक मौजूद रहेगा—आपकी कामयाबी आपसे दूर रहेगी!

वजीर—(दाँत पीसते हुए) चुप रहो! चुप रहो! यह मेरी तोहीन ही नहीं, महाराज के दिल में फ़र्क डालने का तरीक़ा शुरू कर रहे हो! इसे मैं बर्दाश्त नहीं कर सकता। कहे देता हूँ—अगर अपनी जान-बख्शी चाहते हो तो चुप रहो!

जागीर—(व्यंग के साथ) चुप रहूँ, इसलिए कि मेरी जान बच जाय! चुप रहूँ, इसलिए कि देश की सारी ज़िम्मेदारी

लुटेरे के हाथ में पहुँच जाय। जो अपनी हैवानी-ताक़त से प्रजा की सुख-शान्ति को जलाकर राख करदे। नहीं, यह मुझसे न होगा! वज़ीर साहब! यह बदक़िस्मती है कि मेरे पास एक ही जान है, अगर सौ जानें भी होतीं तो वह सच्चाई के मैदान में निछावर कर देता।

न समझो इसको तुम 'मरना' न कोई इससे घबराये!
अमर बनने के इस ज़रिए को अपने काम में लाए!!
बताओ इससे बढ़कर और क्या ख़ुशक़िस्मती होगी!
है जिसकी चीज़ उसके काम में क़ुर्बान हो जाये!!

(महाराज से) महाराज, सावधान हो जाइए। अब अधिक दिनों तक यह ग़फ़लत, यह शराब का दौर क़ायम नहीं रह सकता। वज़ीर साहब की चापलूसी-बातों से दूर हटकर अपनी आँखों म अपनी प्रजा को देखने की कोशिश कीजिये। नहीं, यह विश्वासघात की ज़हरीली आग सल्तनत को भस्म कर देगी।

नशे के दौर ने इस वक्त पर्दा दिल पै डाला है!
हटेगा तब कहोगे आस्तीं में साँप पाला है!!

महाराज—(सरलता के साथ) क्यों ? कैसे ?—क्या रहस्य है जागीरदार साहिब!

जागीर०—(प्रेम के साथ) सुनना चाहते हैं महाराज! तो सुनिए—आपका एक पुत्र था—राज्य का उत्तराधिकारी, देश की आशा! और…… !

वज़ीर—(क्रोध में भर कर) बस! तो…लो…अपनी देश-भक्ति का इनाम! (पिस्तौल से शूट कर देता है। महाराज जाम हाथ में लिए सिंहासन से उतर पड़ते हैं। जागीर-

दार जमीन पर गिर पड़ता है। फिर अधलेटे होकर कराहता है)।

जागीर०—(वेदनात्मक स्वर में) अह !…अह…!!

महाराज—(आश्चर्य से) ख़ून…?—

जागीर०—(जोश के साथ)…ख़ून नहीं, महाराज—नाश ! नाश ! सल्तनत का नाश ! देश की शान्ति का नाश !

यह है वह ख़ून जिसकी आग से सूरज भी जल जाए।
यह है वह ख़ून जिसकी आह से पत्थर पिघल जाए।
यह है वह ख़ून जिसकी धार दुनिया में प्रलय लाए—
यह है वह ख़ून जिससे सल्तनत की नींव हिल जाए।

यह हत्या, यह ज़ुल्म, यह सत्य का ख़ून खाली नहीं जायेगा—वज़ीर साहिब ! तुम्हारे विश्वास-घात का दुनिया में डङ्का पीट कर ही रहेगा ! तुम अकेला मुझे मार कर अपने काले कारनामे को छुपा नहीं सकते। वह सौ मुँह होकर तुम्हारे कानों के पर्दे फाड़ देगा ? सत्य की आयु बड़ी होती है—वह तुम्हारे जैसे नापाक़ हाथों से नहीं मर सकता !

बन रहे दोनों अमर हैं, अपने-अपने काम पर !
तुम सितम की शान पर, और मैं वतन के नाम पर।!

आह ! आह !! महाराज मेरी कामना है—आख़िरी कामना है—कि मेरी मौत आपकी आँखें खोल दे। अपने पुत्र के—…… ! अपने पुत्र के…… !

वज़ीर—(क्रोध से) मरते-मरते अपनी हर्कत से बाज़ नहीं आता—ठहर ! (दूसरा निशाना) मार कर ख़त्म कर देता है। इसी समय महाराज के हाथ से जाम गिर कर चूर-चूर हो जाता है !)

महाराज—(गम्भीरता से) तोड़ दिया ! ……तोड़ दिया—वह आईना भी तोड़ दिया जो मुझे अपनी साफ़ सूरत बतला रहा था ! … ओफ़् ज़ुल्म … ! ज़ुल्म ! मेरी आँखों के सामने एक बे-गुनाह का ख़ून ?

वज़ीर—(बड़े प्रेम से) नहीं, महाराज ! इसका नाम ज़ुल्म नहीं,—राज नीति है ! राज-काज इसी तरह चलता है। आप नहीं समझ सकते, इसके लिए एक नहीं, सैकड़ों मनुष्यों का ख़ून बहा कर सल्तनत की नींव मज़बूत की जाती है। नहीं तो देश में विद्रोह की आग भड़क उठती है।

महाराज—(भोलेपन के साथ) अच्छा ? यह बात है ?—तो लाओ एक जाम और !

(वजीर जाम भर कर देता है, महाराज पीते हैं—सिंहासन पर विराजे हुए)।

[पट-परिवर्तन]

तीसरा दृश्य

[स्थान—श्मशान-भूमि ! नर मुण्ड, हड्डियाँ जहाँ-तहाँ पड़ी हैं ! एक चिता जल रही है।………चारो ओर शान्ति !]—[सुनीता का भागते हुए आना]।

सुनीता—(रोते हुए) पिता जी ! पिता जी !! कहाँ गए मुझे अकेला छोड़ कर ? मुझ अभागिनी को अनाथ बना कर ? आह ! इस भयावने संसार में कौन है मेरा ? किसको अपना दुख सुना कर हृदय की आग को हल्का करूँ ? …… (रोती है) ओह ! देशसेवा के

होम-कुण्ड में, सचाई और भलाई के अनुष्ठान में दे दिया बलिदान! न सोचा कि प्यारी पुत्री—सुनीता किस तरह रो-रो कर— अन्यायी - संसार में—दिन बितायेगी ?···कौन उसके करुण-क्रन्दन पर ध्यान देकर धैर्य धारण करायेगा ? (चिता उठती लपटों को देखते हुए) जला रही हो चिते! जला दो, जलादो,— पिता जी के शरीर को नहीं, नहीं, मेरे हृदय को भी जला दो! उसके साथ भी अन्याय हुआ है, वह भी मर चुका है। उसे भी जला कर राख करदो! (रोते हुए)······ओ, रह-रह कर धधकने वाली आग! तू भी इसी संसार में रहती है तुझे भी निरापराधों को जलाने में आनन्द आता है।···जो उठ नहीं सकता, बोल नहीं सकता उसी बेचारे मुर्दे को तू पेट में उतारने के लिए ये लम्बी-लम्बी जीभें निकाल कर दौड़ पड़ती है! और जो अन्याय कर रहे हैं! गरीबों, बेकसों को मौत के मुँह में ढकेल रहे हैं! देश की बहू-बेटियों का सतीत्व लूटने में पाशविक आनन्द ले रहे हैं!— उन्हें तू राख नहीं करती! उन्हें अपने पेट का आहार नहीं बनाती। क्योंकि वे सबल हैं, ताक़तवर हैं,—वे तुझे नाश कर सकते है! आह!···मेरे रोने! मेरे पिता जी को बचा लो!···पिता जी! पिता जी एक बार तो बोलो—सुनीता से न रूठो, न रूठो!···

(रोते-रोते गिर पड़ती है। उसी समय दूर से गाने की आवाज़ आती है! वह उसे सुनती हुई धीरे-धीरे उठती है— नैपथ्य की ओर देखते हुए! गाने की आवाज़ क्रमशः तेज होती जाती है। और तभी एक वृद्ध-साधु गाते हुए प्रवेश करते हैं)।

—गाना—

मन, मूरख क्यों तू रोता है ?
जो होना है, वह होता है !
क़िस्मत के हैं खेल, खिलाड़ी !
रची उसी ने सब फुलवाड़ी !!
एक चिता में खाक बन रहा—
एक पलँग पर सोता है। मन मूरख०
रोने में क्या है, मतवाले।
कष्टों को हँसकर अपनाले।
'भगवत' साहस लेता मन में—
विजय-बीज वह बोता है ! मन मूरख०

—o—

साधु—(मधुरता से) बेटी ! तू कौन है ? क्या दुख हुआ है—तुझे ? किस की चिता के पास रो रही हो ?

सुनीता—न पूछिए गुरुदेव ! मेरे दुखों का इतिहास ! समझ लीजिए, मैं एक अनाथ हूँ। अन्याय की वेदी पर अपने सुख को चढ़ा चुकी हूँ। इसी चिता में जला जा रहा है-मेरा सुख ! बचाइए बचाइये, न जलने दीजिए उसे ! नहीं, मेरे दुख का ठिकाना न रहेगा ! बिना पिताजी के कौन मुझे ज़ुल्मी-दुनिया की शिकार बनने से बचायेगा ?··· (रोती है। उसी वक्त एक गेरुआ वस्त्र धारी नौजवान-साधु आकर, गुरुदेव से अभिवादन-पूर्वक निवेदन करता है।)

नौ० सा०—गुरुदेव ! पारणा तैयार है !

साधु—(तमक कर) कैसा पारणा ? जब देश की सुकुमारियाँ इस तरह अन्याय से पीड़ित, बिलख-बिलख कर रो रही हैं। निरपराधों-बे कुसूरों की चिताएँ धू-धू कर जल

रहीं हैं। देश का वायु-मण्डल हाहाकारों से भर रहा है। तब उसी देश और समाज के अन्न से पलने वाले साधू मौज से पारणा करते रहें—कितने शर्म की बात है—यह? रहने दो, प्रकाश! आज मैं भोजन न करूँगा।

नौ० सा०—(सुनीता की ओर प्रेम-भरी नज़रों से देखते हुए! वृद्ध साधु से) गुरु देव…!

वृ० सा०—(सुनीता से) बेटी! तुम्हारे पिता का नाम?… किसने उनका वध किया?…कौन है वह नराधम?

सुनीता—(लम्बी साँस लेकर) विजयसिंह जागीरदार की बेटी हूँ मैं। सच्चाई ने उनको मारा! देश-प्रेम ने उन्हें निर्जीव किया! और वज़ीर रणधीरसिंह ने उन्हें क़त्ल कर मेरी अरमानों की दुनिया को उजाड़ डाला। मुझे अनाथ बना दिया!

प्रकाश—(सुनीता की ओर देखते हुए वृद्ध साधु से) गुरुदेव…!

सुनीता—(आँसू पोंछते और आकाश की ओर देखते हुए) आह! परमात्मा अगर इस हृदय को मजबूत बनाया होता, इन हाथों में ताक़त दी होती—ताकि मैं अपने पिता के—बे कसूर पिता—के घातक नराधम वज़ीर से बदला ले सकती, तो कितना अच्छा होता! मेरे हृदय की आग तब कितनी हल्की हो जाती! मगर आज एक ओर अबला का हृदय है—दूसरी ओर बेइन्साफ़ी की हैवानी ताक़त! किस तरह मुक़ाबिला हो सकता है?…

प्रकाश—(उतावली के साथ) गुरुदेव!…गुरुदेव!! मुझे आज्ञा दीजिए, कि मैं इस अबला के—पिता के—खूनी से बदला लूँ। देश के हाहाकारों को रोकने के लिए क़दम बढ़ाऊँ!……

है रखता जिस्म में दिल को, जो दिल में जोश रखता है !
मदद आता है वह सब की, ज़ुबाँ ख़ामोश रखता है !!
मिली है इसलिए ताक़त, लगे गैरों के कामों में !
मिटेतो वह सचाई पर, वतन के कारनामों में !!

गुरुदेव—(प्रसन्न होकर) शावाश !···मेरे प्रकाश—! सच कह रहे हो !···

भलाई, देश सेवा से ही जीवन, ज्योति भरता है !
जो मरता देश के ऊपर, उसी पर देश मरता है !!
है वीरों की यही शोभा, जो सब के काम में आए !
पराई मौत से लड़ने को सीना तान कर जाए !!

मगर···प्रकाश ! तुमको मैं इतनी कड़ी आज्ञा नहीं दे सकता। देश की समर-भूमि को अन्याय की ज्वाला ने भयंकर बना दिया है। जहाँ पर धर्म और न्याय दोनों का ख़ून किया जा चुका है, जहाँ पर स्वार्थ और ऐशोइशरत की पूजा की जा रही है, जहाँ की राज्य-सत्ता मनमाने ज़ुल्म करने में मशग़ूल हो रही है ! वहाँ तुम क्या कर सकोगे, प्रकाश ?—

प्रकाश—(जोश के साथ) क्या कर सकूँगा ?

कर सकूँगा देश की क़ुर्बानियों की इन्तहा !
कर सकूँगा मैं वतन को ज़ुल्मों-जेरों से रिहा !!
कर सकूँगा देश को हैवानियत से होशियार !
गर रहा गुरुदेव का साया मेरे सर पर सवार !!

गुरुदेव—(प्रेम के साथ) लेकिन प्रकाश !···

प्रकाश—(बात काट कर) न रोकिए गुरुदेव ! देश के पवित्र-पथ पर आगे बढ़ने से !···

जिसे हिम्मत ने दहलाया, वह ऊँचा चढ़ नहीं सकता !
बढ़ाने वाला ही रोके तो आगे बढ़ नहीं सकता !!

मैं मानता हूँ—गुरुदेव शासक-वर्ग की दशा आज मदोन्मत्त हाथी की तरह हो रही है, जो अपने से निर्बलों को कुचल डालने में आनन्द लेता है ! लेकिन न भूलिए एक शक्ति—एक ताक़त-फिर भी बाक़ी रह जाती है—जो उसके नशे को दूर करने के लिए—काफ़ी हो सकती है ।

गुरुदेव—(आश्चर्य से) क्या बग़ावत ?—विद्रोह ?

प्रकाश—(गंभीरता से) नहीं !...ज़ुल्मी-शासन उसे इसी नाम से पुकारता है ! मगर उसे बगावत, विद्रोह कहना उतना ही ग़लत है, जितना रात में धूप का निकलना ! अपने नागरिक-अधिकारों को माँगना, ज़ुल्मो-सितम के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाना, बग़ावत नहीं, देश प्रेम है ! जिसके आगे शक्ति-शाली से शक्ति-शाली राज्य-सत्ता घुटने टेक देती है !

गुरु०—अवश्य ! लेकिन क्या जानते हो प्रकाश ? देश-प्रेम कितना ख़तरनाक-काम है ! जलती हुई आग में कूद पड़ना, तलवारों की धारों पर सोना जिसके सामने आसान बात मानी जाती है ।

सुनीता—(भय से) सरासर मौत ! (चिता की ओर देखते हुए)—

देश का ही प्रेम जलता इस चिता की आग में ।
मैं अनाथा बन गई हूँ—देश के अनुराग में ॥
मुल्क-ख़िदमत में उलझना वीरता का काम है ।
देश-सेवा ही असल में मौत का उपनाम है ॥

प्रकाश—(तैश के साथ) सब-कुछ ! लेकिन जिसके हृदय में देश के लिए सच्ची भक्ति है, जो अपने देश-वासियों की रोती हुई आँखें देख कर विकल हो चुका है, जिसकी आत्मा में एक तूफ़ान उठ खड़ा हुआ है ! वह देश-सेवक विघ्नों को देख कर पीछे नहीं लौटता ! मौत उसे नहीं डरा सकती—

समझते हैं जो हथकड़ी को ज़ेवर !
न जिसके दिल में ज़रा भी डर है !
जिसे दुनिया कहती है जेलखाना—
वही देश-भक्तों का आज घर है !!
निकलतीं मुसीबतज़दों की न आहें—
निकलता है तो, बस, कलम-ए-हक !
भले ही उसको चिता जला दे—
मगर नाम उसका सदा अमर है !!

बस, गुरुदेव ! यही अभिलाषा है कि आप खुले-मन से अपने प्यारे शिष्य को आशीर्वाद दें—ताकि वह विघ्न बादलों को ठेलता हुआ कामयाबी हासिल करे ।

गुरु०—(प्रेम के साथ) प्रकाश ! तुम्हारी उचित अभिलाषा मुझे मजबूर करती है, लेकिन हृदय-प्रेम से अन्धा-हृदय-रोकना चाहता है !

इधर है प्रेम की आँधी उधर कर्तव्य-जीवन है !
किसे तरजीह दूं दिल में समाई एक उलझन है ॥

प्रकाश—(घुटने टेक कर) न भूलिए गुरुदेव ! पुत्र प्रेम से बढ़-कर, देश प्रेम है !

उन्हीं मां-बाप का रुतबा जहाँ में भाग्य शाली है।
जिन्होंने करदी हँस कर देश-हित को गोद खाली है।

गुरु—(प्रकाश के सिर पर हाथ रख कर।) जाओ बेटा ! ईश्वर तुम्हारा कल्याण करें। आज से 'आश्रम' का भार तुम्हारे सिर सौंप कर मैं प्रभु-भजन के लिए जाता हूँ।

प्रकाश—(हाथ जोड़ कर उठता है, फिर चिता से राख लेकर) इस अन्याय की वेदी पर बलिदान होने वाले वीरात्मा की राख लेकर मैं प्रतिज्ञा करता हूँ, कि जब तक इस के घातक से बदला न लूंगा—माथे पर त्रिपुण्ड न लगाऊंगा। (माथे का त्रिपुण्ड पोंछ देता है)।

गुरु०—(प्रफुल्लित होकर)

धन्य हो, इस वीरता की भावना का मान हो !
शत्रुओं का अन्त हो, और देश का कल्याण हो !!

(गुरुदेव का जाना)

(पटाक्षेप)

चौथा-दृश्य

[स्थान—सुधा-वेश्या का घर ! मनोहारी सजावट ! सुधा गाती है, उसी समय वजीर रणधीरसिंह आते हैं।]

—गाना—

सुधा—मेरे यौवन की आओ बहार लूट लो !
इस रंगीले दिल का सिंगार लूट लो !!

वजीर—(आकर) ओठों में शरबत, आँखों में मस्ती।
जिनने उजाड़ी है, दिल की बस्ती ॥

सुधा—आओ बस्ती में सौदा उधार लूट लो।
मेरे यौवन की प्यारे बहार लूट लो॥

वज़ीर—प्यारी-सी सूरत सामने आई।
आँखों में प्रेम की चांदनी छाई॥

सुधा—आओ ओठों से ओठों का प्यार लूट लो।
मेरे...............

(दोनों मस्ती के साथ कुर्सियों पर बैठते हैं)

सुधा—(प्रेम के साथ) आज इतनी देर से तशरीफ़ लाने की वजह ?

वज़ीर—(मेज पर से सिगरेट उठाकर सुलगाते हुए) वजह ?—
क्या वजह बतलाऊँ जानेमन !
वह वजह जिसकी वजह से मैं परेशानी में था !
गो मैं था सूखे में, लेकिन दिल मेरा पानी में था !!

सुधा—(कुछ चिढ़ कर) वाह ! वाह ! अजीब वाक़या है ! न जिसका सिर न पैर !......

वज़ीर—(हँस कर) तुम नहीं समझ सकतीं—सुधा !
जिसके दिल की बात है उसको फ़क़त पहिचान है !
बात गूँगे की समझना गूँगे को आसान है !!

सुधा—(कटाक्ष के साथ) हूँ ऊँ ! लेकिन समझाने पर तो जानवर भी समझ लेते हैं। यह न कहो कि समझाना ही नहीं। आज मालूम हुआ कि मुझ से भी पर्दा होने लगा है।
मेरी ग़लती थी कि मैंने दिल को पहिचाना नहीं।
सिर्फ़ मतलब था उसे उल्फ़त का दीवाना नहीं॥

वज़ीर—(प्यार से) ख़फ़ा न हो ओ—प्यारी ! तुम से क्या छिपा सकता हूँ ?

छिप नहीं सकता उजाला जैसे काली रात से।
क्या छिपा सकता है कोई जमां को बरसात से॥
जिस्म हूँ मैं दिल हो तुम, इस दिल की हो बेगम तुम्हीं—
ग़ैर मुमकिन दिल अलग रहजाय दिल की बात से।

सुधा—(प्रेम से) तो कहिए न, बजीर साहिब ! आज देर से आने का क्या सबब हुआ ? आपको मालूम रहना चाहिये कि आपके न आने तक मैं कितनी बे-कल और परेशान रहा करती हूँ।

कलेजा मुँह को आता है, बराबर आह चलती है।
कि आँखें मेह बरसाती हैं, दिल में आग जलती है॥

बजीर—(लापर्वाही से) अरे, वाह ! जंगली भी तो मेरे साथ आया था कहाँ रह गया—कम्बख़्त ! (जोर से) ऐ, जंगली !

जंगली—(नैपथ्य से) जी सरकार ! (आता है)

बजीर—(घुड़क कर) अबे सरकार के बच्चे ! रह कहाँ गया था ?

जंगली—बाक़ायदा बाहर खड़ा था—सरकार !

बजीर—बाहर क्यों खड़ा था ?—क्या पहरा दे रहा था ?

जंगली—नहीं सरकार ! इस घर का दर्वाज़ा तो बाक़ायदा खुला ही रहता है, पहरे की क्या जरूरत !

माल है, दौलत है, पर कूंची नहीं, ताला नहीं।
जो भी आया, वह ही मालिक; और घर वाला नहीं॥

सुधा—(मुसकिराकर) हिस् ! देखा अपने जंगली का जंगली-पन ?

बजीर—(सुधा से) क्या कहूँ ? इस जंगली के मारे तो खुद मैं जंगली हुआ जा रहा हूँ। (जेब से नोट निकाल कर जंगली की ओर फेंकते हुए) ले शराब की बोतलें तो ला !

जंगली—(नोट उठाकर) जी सरकार !

वज़ीर—जल्दी लौटना !

जंगली—अभी लीजिए, बाक़ायदा गया नहीं कि आया। (जाता है)

वज़ीर—(सुधा से) बस, इस की फ़र्माबरदारी ही वह चीज़ है, जो अब तक निभाये जा रही है, वरन् शूट कर देने क़ाबिल है।

सुधा—शूट ! (हँस कर) ग़रीबों को शूट कर देना तो तुम्हारे लिए हँसी-खेल है !

वज़ीर—(ज़ोर से हँसकर) ख़ूब ? यह चुटकी ?...सुधा ! आज देर से आने की वजह भी एक शूट करना ही है ! लेकिन तुम यह सुनकर ताज्जुब करोगी कि मारे जाने वाला कम्बख़्त ग़रीब नहीं, एक बड़ा जागीरदार था ! महाराज का मुँह-लगा मुसाहिब था !

सुधा—(एकटक देखते हुए) क्या मैं पूछ सकती हूँ—उसका क़ुसूर ?

वज़ीर—(दूसरी सिगरेट जलाते हुए) तुम नहीं समझोगी उसका क़ुसूर ! और क़ुसूर-उसूर क्या ? वह मेरा काँटा था ! वह मेरे रास्ते की ज़बर्दस्त ठोकर था ! उसे बग़ैर शूट किए मैं अपने अरमानों की दुनिया नहीं बसा सकता था !

जंगली—(प्रवेश कर) लीजिए सरकार ! बाक़ायदा दो बोतलें तैयार हैं ! [बोतलें खुलतीं हैं, जाम, भर-भर कर सुधा और वज़ीर दोनों पीते हैं। जंगली एक ओर खड़ा रहता है।]

वज़ीर—(मौज के साथ)।

कर दिया अब मस्त मुझ को स्वर्ग के पैग़ाम ने !
यह सुधा है जाम में फिर तुम सुधा हो सामने !!

जंगली—(स्वगत)—

न भूलो स्वर्ग के सुख पर, भयानक नर्क के बिल हैं!
सुधा समझे हो तुम जिनको, वे दोनों ही हलाहल हैं!!

सुधा—(जाम खाली करते हुए) प्यारे! कितना .खुश क़िस्मत दिन होगा, जब तुम देश के बादशाह होगे! दुनिया की सारी गर्दनें तुम्हारे क़दमों में झुकेंगी—सिजदा करेंगी!

वजीर—(प्रेम से तन्मय होकर) और तुम? तुम बनोगी उस बादशाह की प्यारी-बेगम! जो आज एक वेश्या के नाम से मशहूर है वह एक .खुशनसीब बादशाह की बेगम बनकर सल्तनत पर हुकूमत चलायेगी! हः हः हः हः (हँसता है)

सुधा—(उतावली के साथ) मगर कब तक? अब देरी नहीं गवारा होती—प्यारे! इस तरह इन्तजार में ही दिन बीतते अच्छे नहीं लगते!

वजीर—(जाम चढ़ाते हुए) सब्र करो, सब्र करो मेरी दिलरुबा! वह दिन अब दूर नहीं! जब राज-मुकुट मेरे शिर पर होगा, मैं बादशाह बनूँगा और तुम्हें बनाऊँगा बेगम! यक़ीन करो मेरी बात पर तुम्हें महारानी बनाकर ही रहूँगा—जानेमन!

सुधा—(.खुश होकर) लेकिन महाराज की ताक़त?—

वजीर—(दृढ़ता के साथ) महाराज की ताक़त, मेरी ताक़त के आगे खाक़ है! कुछ नहीं कर सकती—वह! भोला—बेवकूफ़—महाराज मेरी बात में जरा भी दस्तन्दाजी नहीं कर सकता! मैंने अपने रास्ते के एक-एक काँटे को उखाड़ कर फेंक दिया—लेकिन वह चूँ तक न कर सका! आज बात मेरी और ज़ुबान उसकी है! मजमून

मेरा और दस्तखत उसके हैं ! लेकिन कल, जानती हो क्या होगा ?

सुधा—(भोलेपन के साथ) क्या होगा ?

वजीर—(जाम उठाते हुए) मेरे एक इशारे पर सल्तनत में आग और मुस्कराहट से अमन बरस उठेगा।

जंगली—(स्वागत) खा रहे हो मन के लड्डु, कौन इसमें फ़ायदा ?
सामने आ जाये जो-कुछ, है वही बाक़ायदा !!

सुधा—(प्रेमोन्मत्त होकर) तुम कितने अच्छे हो—देवता !

वजीर—(ज़ोर से हँसकर) मैं देवता ? देवता नहीं पुजारी हूँ—
प्रेम की देवी हो तुम, इस प्रेम-मंदिर की सुधा !
मैं पुजारी हूँ तुम्हारे प्रेम के परसाद का !!

जंगली—(स्वगत) भूल ! भूल रहे हो—
यह वह घर है जहाँ पर रूह तक नापाक होती है।
यह वह घर है जहाँ इन्सानियत भी खाक़ होती है !
न रहता क़ौम का फ़िक्रा, नहीं मजहब की पाबंदी-
यह वह घर है जहाँ पर आबरू हल्लाक़ होती है।
न समझो प्रेम की पूजा यहाँ चांदी की पूजा है—
यह वह घर है जहाँ उल्फ़त बाला-ए-ताक़ होती है।

सुधा—(प्रेम से) नहीं मेरे राजा !……
अगर हो तुम जो पैमाना तो मैं रंगीन—पानी हूँ !
किसी की जिंदगी तुम हो तो मैं उसकी जवानी हूँ।।

जंगली (स्वगत) जवानी ? जवानी नहीं हो तुम !—
हो तुम वह आग जो रहती है मिलकर सर्द-पानी में।
जो लासानी कही जाती है अपनी नागहानी में ।।
वही आते हैं जल-मरने, दफ़न कर अपनी हस्ती को-
जवानी का मजा जो चाहते हैं नातवानी में ।।

वज़ीर—(सुधा के गले में हाथ डालकर) चलो मेरी रानी !...
(जाम—भरते हुए)

चढ़ालो एक प्याली और जिससे रंग जम जाये !
खलक पर लुफ्त स्वर्गों का घड़ी भर को उतर आये ॥

सुधा—(हाथ में हाथ डालकर) चलो !

[पट परिवर्तन]

पांचवां दृश्य

[स्थान तपोवन, झोंपड़ी है जिसके दर्वाजे पर बोर्ड लगा है—'साधु-आश्रम' सामने उसके साधु मण्डली बैठी भक्ति के साथ प्रभु-भजन कर रही है।]

— गाना —

बन्दे वीर-नाम गुण गाले। बन्दे०
यह दुनिया पानी की रेखा।
क्या सुख तूने इसमें देखा ?
भूल रहा क्यों तू अपनापन—
अपनी को अपनाले। बन्दे०
दीपक बुझता, सूरज छिपता।
अन्धकार प्रथवी को ढकता।
किसका 'भगवत्' तुझे भरोसा—
सोई ज्योति जगाले। बन्दे०

(गाने की ध्वनि चलती रहती है)

प्रकाश—(प्रवेशकर, गंभीर-स्वर में) बन्द करो गाना !

साधु-दल (उठकर, एक साथ) जो आज्ञा महाराज !

प्रकाश—महाराज ? आज मैं महाराज नहीं, देश-दूत बनकर तुम्हारे सामने आया हूँ ! एक नया सन्देश सुनाने के लिए—नया-रूप रखकर आ मौजूद हुआ हूँ ! मेरे साधु-जीवन का स्वप्न-भंग हो चुका, मैं आज जाग गया हूँ—आज जागरण का दिन है ! चाहता हूँ कि तुम लोग भी जाग जाओ ! समय की आवश्यक माँग का सन्मान करो !……समझ सको कि इस तरह भीख मांग-मांग कर पेट भर लेना ही जीवन नहीं है। जीवन का उद्देश्य जीवन का मक़सद दूसरों की भलाई करना, देश सेवा करना भी है। देश-वासियों के मेहनत से कमाये हुए टुकड़ों पर मौज उड़ाना साधुता नहीं ढोंग है ! ईश्वर-भक्ति को बदनाम करना है !

साधुदल—(सत्यता पूर्वक) सच है ! सच है !

प्रकाश—(खुश होकर) मित्रो ! केवल सच कहने भर से काम नहीं चलेगा ! देखना होगा समय क्या कहता है ? देश क्या चाहता है ?

साधु-दल—(सब एक साथ) क्या चाहता है देश ?

प्रकाश—हाँ ! यही जान लेना तुम्हारा कर्तव्य है ! आज देश को साधुओं की नहीं, सैनिकों की ज़रूरत है ! उपदेश-दाताओं की ज़रूरत नहीं, उपदेश मानने वालों की आवश्यकता है ! जो देश में फैली हुई अत्याचारों की आग को पानी बनकर बुझा सकें। जो बे क़ुसूरों की गर्दनों पर लटकने वाली तलवारों के लिये ढाल बन सकें। अपने धर्म, अपने देश, और अपनी माँ—बहिनों की सतीत्व रक्षा के लिए अपनी क़ीमती कुर्बानी दे सकें।

जिसने नहीं निज देश को निज-साधना का बल दिया।
व्यर्थ ही उसने धरा का भार से बोझल किया॥
धर्म पहिचाना नहीं, कर्तव्य को भूला रहा—
मूक—पशु की भांति कायर मृत्यु-पथ पर चल दिया।

साधु-दल—सत्य है, सत्य है !

प्रकाश—आज जब देश में जीवन-मरण की समस्या पनप रही है ! एक घातक-क्रांति ग़रीबों का रक्त चूसने के लिए आगे बढ़ती चली आ रही है ! धार्मिक अधिकारों पर वज्रपात होने जा रहा है ! तब वैसी दशा में—देश में रहने वाले साधू—भगवान को रिझाने का ढोंग बनाए रखें, यह कितने शर्म की बात है ? कौन इसे पसन्द करेगा ? ग़रीब-समाज की छाती पर अपनी रोटी का बोझ डालकर उसे और भी विपत्ति में ढकेलना क्या साधुता का मानी है ?

साधु-दल—(कड़े स्वर में) कदापि नहीं !

प्रकाश—तो छोड़ दो मित्रो ! साधुता के ऐसे जघन्य ढोंग को ! जिसका आज समय निकल चुका है। जो दुनिया के लिये बेकार चीज़ साबित हो रही है !—

माना कि जीवन के जागरण का,
विकासकारी उदय यहीं है।
मगर ज़माना ये कह रहा है,
कि साधुता का समय नहीं है !

जब समय होगा, देश में शान्ति होगी ! तब हम साधुता के सच्चे-अर्थ को समझने की कोशिश करेंगे। और दुनिया को बतला सकेंगे कि साधुता कितनी पवित्र और कल्याणकारी-वस्तु है ! जो केवल अपना

ही कल्याण नहीं चाहती, संसार के असंख्य दुष्टों, नराधमों, पापियों को बन्दना करने योग्य भी बना देती है !

साधु-दल—सत्य है, आपका कहना सत्य है !

प्रकाश—भूलते हो, यह मेरा कहना नहीं, मेरी आवाज़ नहीं; देश की आवाज़ है ! देश चाहता है कि ऐसे सङ्कट के समय में साधु-मण्डली उसके काम आए। यह 'साधु-आश्रम'—(बोर्ड की ओर संकेत करते हुए) 'सैनिक-आश्रम' बनकर उसकी इमदाद करने के लिये क़दम बढ़ाये !

कर दो क़ुर्बानी तरक्क़ी का इसी में राज़ है !
यह तक़ाज़ा वक़्त का है देश की आवाज़ है !!

साधु-दल—तैयार हैं !—

तैयार हैं हम देश-हित का काम करने के लिए !
तैयार हैं हम मौत से भी जूझ-मरने के लिए !!

प्रकाश—(प्रसन्न होकर) शाबाश !...बस उठो; युगान्तर स्थापित करने का समय आ पहुँचा !

[प्रकाश झोंपड़ी के दर्वाज़े के बोर्ड को हटाकर दूसरा बोर्ड लगाता है—जिस पर लिखा है—'सैनिक-आश्रम' ! फिर झोंपड़ी में घुस वेश परिवर्तन कर, नेकर खाक़ी कमीज़ की ड्रेस में बाहर आता है। क्रमशः सभी साधू सैनिक बन जाते हैं ! प्रकाश, हाथ में केसरिया-रंग का झण्डा लेकर बीच में खड़ा होता है, और सब इधर-उधर]

प्रकाश—(ज़ोर से) इन्कलाब !

साधु-दल—(एक साथ) जिन्दाबाद !

प्रकाश—वतन के वफ़ादार दिलेरो ! मुल्क मैदान के शेरो ! बढ़ो—
दिखा दो मुल्क के दीवाने क्या-क्या कर गुज़रते हैं !
कि अपना ख़ूँ बहाकर भी न मुँह से आह भरते हैं !!
ग़ज़ब ढाओ, सितम ढाओ, क़हर की बिजलियाँ ढाओ—
दिलावर मौत का भी सामना हँस-हँस के करते हैं !!

[पटाक्षेप]

छटवाँ दृश्य

[स्थान—सुनीता का घर ! वज़ीर रणधीरसिंह प्रेमी के रूप में खड़े बातें कर रहे हैं ! सुनीता के मुँह पर रौद्रता, दीनता और भय तीनों विराज रहे हैं।]

सुनीता—(तेज़ी के साथ) न बुझी ! न बुझी ? आख़िर तुम्हारे हृदय की आग ! बे-क़ुसूर पिताजी को क़त्ल कर, अब मेरा सर्वनाश करने पर तुले हो ! न सताओ, न सताओ वज़ीर साहिब, रहम करो ! नहीं, इस अनाथ-अबला के आँसू तुम्हें समुन्दर की तरह डुबो देंगे ! प्रलय के पानी की तरह इस दीन-दुनिया से बहाकर छोड़ेंगे ! मौत की तरह तुम्हारी छाया का पीछा करेंगे !

वज़ीर—(हँसकर) मगर नहीं समझतीं—भोली ! आँसू निकलने के पेश्तर तुम्हें खिलखिलाकर हँसना पड़ेगा। और उस हँसने के भीतर दुनिया की सारी रंगीनी समा जायेगी, बहिश्त के सारे मज़े खेलते-कूदते दिखाई देंगे ! मेरी अँधेरी झोंपड़ी में नूर का चिराग़ रौशन हो उठेगा !

सुनीता—(खीजकर) चुप रहो ! मत देखो कोरी कल्पना के स्वप्न !

ये स्वप्न तुम्हें बर्बाद कर डालेंगे ! काँटों में उलझा देंगे ! .....

बजीर—(मुस्कराते हुए) रानी ! कितनी भोली हो तुम ! नहीं जानतीं कि काँटों के भय से गुलाब के फूल को कई छोड़ नहीं देता ! काँटे जमीन पर रगड़ दिए जाते हैं ! और फूल रसिक के हाथों का खिलौना बन जाता है !

सुनीता—(तलक कर) खिलौना ? भूलते हो, भूलते हो बजीर साहिब ! वह खिलौना नहीं, मौत बन जाता है ! उसकी बेजुबान-खुशबू दिमाग को पागल बना देती है ! पागल अपनी जिन्दगी के मक़सद को भूल जाता है ! नेकी और इन्साफ़ को भूल जाता है ! और मौत से खेलने लगता है !

पापों की स्याह-स्याही का जिसमें खुमार है !
वह जिन्दा भी रहता है तो मुर्दा शुमार है !!

बजीर—(हँसकर) ग़लती पर हो सुनीता ! मैं समझता हूँ उस जिन्दगी से, जिसके भीतर कोई रंगीनी, कोई लुत्फ़, कोई रस नहीं, वह मौत बहतर है, जो दुनियाबी-जायक़ों से भरी-पूरी है ! जिसका मिठास किसी को लुभा सकता है !

सुनीता—झूँठ ! उस जहरीले मिठास पर रीझने वाला एक पागल के सिवा और कौन हो सकता है ?

बजीर—(प्रेम से) पागल ? सचमुच ! सुनीता, तुम्हारी रूप-मदिरा ने मुझे पागल ही बना दिया है ! मैं सारी सल्तनत को तुम्हारे क़दमों में डालने के लिए तैयार हूँ ! बोलो—बोलो क्या यह पसन्द के लायक़ बात नहीं ! जो एक अनाथ आज ग़रीबी की बेकार जिन्दगी

काट रही है ! वही कल राज-रानी बनकर दुनिया पर हुकूमत चलाए ! उस वज़ीर की जो जल्दी ही सिंहासन पर बैठने वाला है—प्राणेश्वरी बनने का सौभाग्य प्राप्त करे ! न ठुकराओ, न ठुकराओ मेरी प्रेम-भिक्षा की प्रार्थना को—सुनीता ! मैं तुम्हारे पैरों पड़ता हूँ !

[वज़ीर सुनीता के पैरों में गिरता है; सुनीता पैर पटक कर दूर हटती है]

सुनीता—(क्रोध से) दूर हटो ! दूर हटो नराधम ! शर्म नहीं आती एक निरीह-अबला को सुनहरे-जाल में फँसा, धर्मभ्रष्ट करने के घृणित तरीक़े को काम में लाते हुए ! मुझे छोड़ दो। मैं जैसी भी हालत में हूँ—ख़ुश हूँ ! मुझे तुम्हारी रङ्गीन-दुनिया, सल्तनत की हुकूमत और अमीरी ठाठ-बाट की ज़रूरत नहीं।......

वज़ीर—(झुँझला कर,—दूर खड़े होकर) यह घमंड ?

सुनीता—अपने ईमान पर !

वज़ीर—इतनी मजबूती ?

सुनीता—अपनी जान पर !

वज़ीर—इतना भरोसा ?

सुनीता—अपने भगवान् पर !

वज़ीर—(क्रोध से) तो देखूँगा, तेरे भगवान् का करिश्मा ! क्या करेगा—वह ? कहाँ है तेरा भगवान ?

सुनीता—(शांति से) भगवान् ? भगवान् को नहीं जानते, तभी प्रजा पर ज़ुल्मों-क़हर की बिजलियाँ ढा रहे हो ! प्रजा-पुत्रियों की इज्ज़त लेते हुए नहीं घबराते ! वज़ीर साहिब ! भगवान उसी पाक-रूह का नाम है ! जो दुनियावी-बुराइयों से एक दम जुदा है। जिसकी रूहानी-ताक़त दुनिया के ज़र्रे-ज़र्रे में समाई हुई है।

न जिसकी शान का सानी, निरालो-शान रखता है।
जो भी अच्छाइयाँ हैं, सब, उन्हें भगवान रखता है॥

बजीर—(तमक कर) साथ ही इसे भी न भूलो कि मैं भी कुछ शान और ताक़त रखता हूँ !···सुनीता !—

सर रईसों के झुका करते हैं मेरे सामने।
शेर-दिल, गीदड़ बना करते हैं मेरे सामने॥
मैं अगर चाहूँ तो दुनिया में प्रलय लाऊँ !
अगर इच्छा करूँ तो रात में सूरज को चमकाऊँ !!

सुनीता—(*गम्भीरता से*) ओफ़ ! हैवानी ताक़त पर इतना जौम ? प्रभुता के मद पर इतना अहंकार ?···नहीं जानते, नहीं जानते कि भाग्य की एक ठोकर तुम्हारी इस अहंकार की चट्टान को चूर-चूर करने की शक्ति रखती है ! ग़रीब की एक आह तुम्हारा सर्वनाश करने के लिए काफ़ी हो सकती है।

जब तुम्हारा पाप से पूरा घड़ा भर जायेगा।
तब हक़ीकत का नजारा सब नज़र आजायेगा॥
तब तुम्हें दिन में सितारे दीखने लग जायेंगे।
प्राण, प्राणों से निकलने के लिये घबरायेंगे॥

बजीर—(जेब से सिगरेट निकाल कर सुलगाते हुए) बस, बहुत सुन चुका सुनीता ! मैं तुम्हारे पास उपदेश सुनने के लिए नहीं, अपनी इच्छा जाहिर करने के लिए आया हूँ। मैं तुम्हें प्यार करता हूँ।

सुनीता—(शान्ति से) प्यार ? प्यार का पहिला नमूना है मेरे पिता जी की निर्दयता पूर्वक की गई हत्या ! और अब फिर प्यार ज़ाहिर किया जा रहा है। बजीर साहिब, मैं जानता हूँ—यह प्यार उसी तरह का है जिस तरह

मारने से पहिले बिल्ली चूहे को प्यार करती है। फाँसी लगाने से पहिले मुलजिम के साथ हमदर्दी का बर्ताव किया जाता है।

मिला कर आग पानी में, मुझे उसमें डुबाना है।
पिलाना तो जहर है और शर्बत का बहाना है॥

बजीर—(दुलार से) नहीं प्यारी ! मुझे इतना हृदय-हीन न समझो मैं शपथ खाकर कहता हूँ कि इसमें कोई धोखा नहीं। मैं तुम्हें राज रानी बना कर ही रहूँगा !...

निराले मन के मंदिर की तुम्हें देवी बनाऊँगा।
चढ़ा कर प्रेम-सामिग्री मैं देवी को रिझाऊँगा॥

सुनीता—(क्रोध से) चुप रहो, बजीर साहिब ! एक अबला की पवित्रता पर कलंक लगा कर उसे न सताइए ! मैं किसी जुल्मी, देश-द्रोही अन्यायी अहंकारी की दासी नहीं, मौत बनना चाहती हूँ। अपने पिता के हत्यारे की सूरत देखना भी पसन्द नहीं करती ! दूर हो जाइये आप मेरे सामने से !

बजीर—(झुंझला कर) समझ कर बोलो सुनीता ! तुम मेरा अपमान कर रही हो ! मैं इसे बर्दाश्त नहीं कर सकता ! आखिर मुझे भी गुस्सा आता है। मैं भी ताक़त रखता हूँ !

सुनीता—(चिढ़ा कर) आप ताक़तवर हैं ? आपकी ताक़त का उदाहरण एक अबला की जिन्दगी को अनाथ बना देना, उसे दर-दर की भिखारिन बना देना, इतने पर भी शांति न हो, उस बेकस के एकान्त घर में घुस कर अपनी गुस्सा और ताकत का भय दिखलाना ही हो सकता है।

गरीबों के सताने में जो ताक़त आज़माता है !
समझदारों में वह अपने को बुज़दिल ही बनाता है !!

वज़ीर—(क्रोध से) ख़ामोश ! कहे देता हूँ—सुनीता ! तुम्हें मेरी बन कर ही रहना होगा ! प्रेम और प्रार्थना के बल पर नहीं, तो ताक़त के बल पर ही सही। (नर्मी के साथ) तुम्हारी यह दिल को छीन लेने वाली—कमसिन ख़ूबसूरती मेरे ही लिये है !

सुनीता—(गरज कर) चुप ! इज्जत लूटने वाले शरीफ़-डाकू चुप ! ओह ! जहरीले-शब्दों को उगलने वाली तेरी जीभ, के सौ टुकड़े क्यों नहीं हो जाते ? क्यों नहीं यह सुनने के पहिले ही मेरे कान बहरे बन जाते ! आह ! न जला, न जला, अत्याचारी ! मुझे अपमान की आग में न जला ! निर्बल के ऊपर अपने बल की परीक्षा न कर ! नहीं, सतीत्व का महत्व जानने वाली भारतीय अबला की आह तुझे भस्म कर देगी !

आह जब मुँह से निकाली जायगी !
तब न वह तुझ से सँभाली जायगी।
मौत के पर्दे में तू छिप जायगा—
मत समझ उसको कि खाली जायगी।

वज़ीर—(डपट कर) ऐ ज़बाँ दराज छोकरी ! बन्द कर अपनी बकवास ! वर्ना अपने किए की सजा पायेगी !

अब तलक था फ़ैसला मन्द-मन्द-सी मुस्कान पर !
अब समझ ले फ़ैसला होता है तेरी जान पर !!

सुनीता—(तेजी के साथ) तैयार हूँ ! तैयार हूँ—ज़ालिम ! अन्याय की वेदी पर अपना ख़ून चढ़ाने के लिए। रँगडाल, अपने इन नापाक हाथों को एक स्त्री का क़त्ल

कर और भी नापाक बना ले। मगर······मगर मेरी इज्जत पर हमला न कर !

होके बे-धर्म जिऊँ ऐसा न दिखला पाए !
जान जाए तो भली, धर्म न जाने पाए !!

वजीर—(मुलामियत से) देखो सुनीता ! एक बार फिर समझाये देता हूँ—समझ लो तुम मेरी होकर ही जिन्दा रह सकती हो ! नहीं, इसका नतीजा क्या होगा—जानती हो ?—

सुनीता—(कड़े स्वर में) जानती हूँ मौत ! लेकिन मैं तुझ जैसे खूँख्वार के गले लगने से मौत के गले लगना पसन्द करती हूँ ! वह किसी के धर्म को नहीं लूटती !

वजीर—(क्रोध से) अच्छा, देखूँगा तेरा अहंकार ! मेरा अपमान करने वाला दुनिया में बोलता-जागता नहीं रहता !

(तेजी से प्रस्थान)

सुनीता—(स्वगत) गया ! गया ! अस्मत का लुटेरा ! इज्जत का डाकू ! मौत का पैग़ाम ! गया ! रक्षा कर, रक्षा कर, भगवान् ! इस अनाथ-बालिका की ! अपने सुदृढ़ हाथों से थाम ले डूबती हुई जीवन-पतवार ! कौन है तेरे बिना मेरा मददगार !

जहाँ पर आदमी का आदमी प्राणों का ग्राहक है !
किसे बतला सकूं दुश्मन किसे कहदूँ सहायक है !!
तुझी पर है भरोसा आखिरी ताक़त तुही मेरी है—
कि तू दुश्मन के दुश्मन का भी रक्षक और मालिक है !!

— पटाक्षेप —

सातवाँ-दृश्य

[स्थान—राज-पथ, प्रकाश का झण्डा लिए हुए—सैनिक-जत्थे के साथ गाते हुए प्रवेश ! बीच में प्रकाश, इधर-उधर सैनिक]

— गाना —

है जान से बढ़कर देश हमारा, हों उस पर बलिदान !
कण्टक-पथ के निरभय-राही !
हम स्वदेश के अमर-सिपाही !!
जीते-जी तक हम रक्खेंगे, इस झण्डे की शान !!
है जान से बढ़कर देश हमारा, ...
आजादी के हम दीवाने !
शक्ति संगठन की बतलाने !
मनसे 'भगवत्' नहीं तजेंगे, स्वाभिमान की आन !!
है जान से बढ़कर देश हमारा, ...

(गाते हुए प्रस्थान)

— पटाक्षेप —

आठवाँ-दृश्य

[स्थान—दर्बार ! महाराज सिंहासन पर विराजे हैं ! वज़ीर जाम भर-भर कर पिला रहा है ।]

अजित०—(जाम चढ़ाते हुए)

पिला दो स्वर्ग का शर्बत, बुझे दिल की तपन साक़ी !
न सागर में रहे बाक़ी, न मुझ में होश ही बाक़ी !!

कहो, वज़ीर साहिब ! राज्य की कैसी दशा है ? प्रजा का प्रबन्ध तो ठीक है न ?

वज़ीर—(अदब से झुककर) हाँ, जहाँपनाह ! प्रजा चैन की नींद ले रही है ! आप का राज्य दिनोदिन मजबूती की ओर जा रहा है । किसी में ताब नहीं, कि सिर उठा सके !

उठाता है नजर जो वह नजर अपनी को खोता है !
जो सिर उठता है फ़ौरन मौत के दामन में सोता है !!
यह है इक़बाल की .ख़ूबी कि दुश्मन की .ज़ुबाँ चुप है—
मुक़द्दर कुछ नहीं करता जो मैं करता हूँ, होता है !

अजित०—(भोलेपन के साथ) अच्छा, यह बात है, तो लाओ एक जाम और ! (वज़ीर जाम भर कर देता है। उसी समय सिपाहियाने ड्रेस में जंगली का प्रवेश)

जंगली—(फौजी सलाम के साथ) महाराज ! बा-क़ायदा कुछ लोग आप से मिलना चाहते हैं। हुक्म हो तो रू-बरू किया जाय।

वज़ीर—(घुड़क कर) भाग जाओ। कह दो कि महाराज राज-काज में मुब्तला हैं। नहीं मिल सकते !

जंगली—(निराले ढंग के साथ) मगर वह लोग बा-क़ायदा "!

वज़ीर—(बात काट कर) धुत ! बा-क़ा-दे का बच्चा !

महाराज—(नशे के ढङ्ग में) आने दो ! मुझसे मिलना चाहते हैं ?—मैं उनसे मिलूँगा ! उनके दुख-दर्द को सुनना भी मेरा राज-काज है !...

'मिलूंगा मैं सदा उनसे जो मुझ से दिल से मिलते हैं !
कसिश दिल की है रवि की रोशनी से कमल खिलते हैं !

जंगली—(अदब से झुक कर) बा-क़ायदा बात है महाराज !
(जाता है)

(प्रकाश का अपने सैनिक जत्थे के साथ प्रवेश)

सैनिक-दल—(एक साथ) महाराज की जय हो !

महाराज—(संजीदगी के साथ) कहो ? आने का सबब ?

प्रकाश०—(गंभीरता के साथ) सबब ? आपके कानों तक ग़रीब प्रजा की करुण-पुकारों का पहुँचाना ! देश की

निर्दयता-पूर्वक लूटी जाने वाली शान्ति और उसके भयंकर परिणाम से आपको सचेत करना !

गरीबों की गरीबी से बनी ये बादशाहत है !
सितम जितना उधर है, इस तरफ़ उतनी ही आफ़त है !
भलाई चाहना मकसद है, दोनों की बराबर ही—
वतन के प्रेम की दिल में लिखी जिसके इबारत है !!

महाराज—(ताज्जुब से) क्या हो रहा है देश में ?···

प्रकाश—(जोश के साथ) क्या हो रहा है ?—आप नहीं जानते ?

इधर रँगरेलियाँ हैं, दबदबा है ख़ुशनसीबों का !
उधर आहों के शोले हैं और रोना है ग़रीबों का !!
इधर मस्तों के मजमे में शराबे दौर चलता है !
उधर खूँ-जिगर आँखों से गमगीनों का ढलता है !!
इधर हैवानी ताक़त लूटती, इज्जत शरीफ़ों की।
उधर मिट्टी में मिलती ज़िन्दगी, बेकस-ज़ईफ़ों की !!

वज़ीर—(स्वगत) यह क्या ?—काँटा काँटा ?

एक काँटा तोड़ कर फेंका तो दिखलाया नया !
दिल में चुभने के लिये जो रास्ते में आ गया !!
है नहीं वाक़िफ़ मेरी ताक़त की नूरे शान से !
जूझने को आ गया है, ख़ुद ही अपनी जान से !!

महाराज—(आश्चर्य से वज़ीर की ओर) सुन रहे हैं वज़ीर साहिब इस नौजवान बहादुर की बातें ?

वज़ीर—(मज़बूत स्वर में) सुन रहा हूँ जिन बातों के सुनने के लिये एक सैकिण्ड भी शाही वक्त बर्बाद नहीं करना चाहिये ! जिस ज़ुबान को इस बेख़ौफ़ी के साथ

बोलने का मौक़ा दिया गया है, जिसे खींच लेना चाहिए था—उसी ज़ुबान से निकली हुई बातें सुन रहा हूँ—जहाँपनाह !

ये बातें ही नहीं हैं बल्कि शैतानी शरारत है !
खुले शब्दों में कहना चाहिए जिसको बग़ावत है !!

प्रकाश—(तैश में भर कर) चुप रहो, चाटुकार ! तुम्हारी चालबाजियाँ मुझ से छिपी नहीं हैं ! देश का बच्चा-बच्चा तुम्हारी शैतानी हर्कतों से परिचित हो चुका है !··· सोचो, ज़रा मनुष्यता को हृदय में रख कर सोचो—जिसे तुम बग़ावत कह रहे हो, उस बग़ावत की बुनियाद, तुम हो ! देश की बरबादी की जड़, तुम हो ! सल्तनत को ख़ाक में मिला देना तुमने बिचारा है !

बग़ावत जिसको कहते हो, वह अपनी ही हिफ़ाज़त है !
तुम्हारे ज़ालिमाना-ज़ुल्मों की पूरी शहादत है !!
न भूलो सल्तनत के जौम में इन्सानी—फ़र्ज़ों को—
ये सारी सल्तनत आख़िर प्रजा ही की अमानत है !

बशीर—(ज़ोर से हँस कर) ख़ूब ! नादान-बच्चे ! राजा का राज्य, अपनी चीज होता है ! वह प्रजा की अमानत, नहीं, राजा की ताक़त का फल होता है !

प्रकाश—(गंभीरता से) हरगिज नहीं ! प्रजा से राजा बनता है, राजा से प्रजा नहीं बनती।

जो राजा राज्य के मद से प्रजा को त्रास देता है !
वो अपने हाथ से ही मोल अपना नाश लेता है !!

बशीर—(क्रोध से) चुप ! याद रख, इस ज़ुर्अ़दराजी का नतीजा······

महाराज—(बात काट कर) जगाने दो, जगाने दो ! वह मुझे जगा रहा है ! मेरी खुली हुई आँखों में रोशनी डाल रहा है ! स्वप्नों को सच्चाई में तब्दील कर रहा है ! (प्रकाश से) कहो, मेरे प्यारे युवक, !-कहो ! मैं सब सुनूँगा !

प्रकाश—(प्रेम पूर्ण स्वर में) देश की दशा पर ध्यान दीजिए— महाराज ! जल, थल, आकाश सभी से त्राहि-त्राहि का निनाद निकल रहा है ! प्रजा के विवश-हृदयों में अत्याचार का मूक-इतिहास आग की लपटों से लिखा जा रहा है ! जो एक दिन आपकी राज्य-सत्ता को होली की तरह भस्म कर देगा। प्रजा को गुलाम नहीं, पुत्र समसमझना राजा का कर्तव्य है। प्रजा की उचित माँग पर अपना बड़े से बड़ा बलिदान चढ़ाकर भी प्रजा की—देश की आवाज का सम्मान करना उसका फर्ज होता है।

वजीर—(ज़ोर से) ग़लत ! राजा, राजा होता है ! उसका अधिकार उसकी इच्छा पर चलता है, प्रजा के इसारों पर नहीं !

प्रकाश—(गरज कर) चुप रहो ! अपनी ही शेखी में न भूले रहो ! अगर देखना चाहते हो, तो देखो !…राजा का कर्तव्य !

[प्रकाश की उंगली के इसारे पर, पटाखे की आवाज के साथ—आधा पर्दा फटता है। सामने सिंहासन पर मर्यादा पुरुषोत्तम-राम विराजे हैं ! वीर-लक्ष्मण हाथ जोड़े खड़े हैं]

राम०—(गंभीरता के साथ) हठ न करो, लक्ष्मण !—

पुत्र से बढ़ कर प्रजा है, नीति के मन्तव्य से !
कष्ट जो देता प्रजा को, भ्रष्ट वह कर्तव्य से !!

लक्ष्मण—(सविनय) परन्तु—भैया ! सोचो तो ? क्या प्रकाशमान् सूर्य-किरणों में भी सन्देह होता है ? क्या शरदेन्दु की अल्हादकारी-चाँदनी में भी धोखा, या दम्भ पाया जाता है ? क्या खिले हुए कुमुदों की सौन्दर्यता पर भी अविश्वास किया जा सकता है ? क्या पार्वतीय शीतल झरनों की निर्मुक्त संगीत-धारा में भी वासना की श्यामता दृष्टिगत होती है ? नहीं, प्रभु ! ऐसा नहीं होता !

राम०—(दृढ़ स्वर में) किन्तु प्रजा ऐसा ही समझती है—लक्ष्मण ! उसे सीता की पवित्रता पर सन्देह है ! वह उसकी निन्दा करती है, अपवाद करती है !

लक्ष्मण—(तेजी के साथ) अपवाद ? अपवाद पर न जाओ, भैय्या ! लोग धर्म का भी अपवाद करते हैं, ईश्वर का भी अपवाद करते हैं। परन्तु उन्हें त्यागा तो नहीं जाता ! यह सब मूर्खों की मूर्खता का प्रदर्शन है ! जो माता-सी ममतामयी, नवनीत-सी कोमल-हृदय, और धर्म की तरह पवित्र, महासती सीता के लिए दुर्वचन कहते हैं ! वह दुष्ट, नराधम ! (ज़ोर से) नारकी-कीट ! अपने जीवन-कुसुम को क्रोधाग्नि में जला कर भस्म करना चाहते हैं !

राम०—(स्नेह के साथ) शान्ति रहो—लक्ष्मण ! शान्ति रहो !

लक्ष्मण—(क्रोधाकृति के साथ) शान्ति ? कैसी शान्ति ? जिसके भवन से एक महान् विभूति सर्वदा के लिए लुप्त हुई जा रही हो, क्या वह शान्ति ले सकता है ? जिसके हृदय की पवित्र कोमलता मिथ्याभिमानियों के कारण

पद-दलित हुई जा रही हो, क्या वह शांति का उपासक ही बना रहेगा ? कदापि नहीं ! माता-सीता पर कलंक लगाने वाली जिह्वाओं का छेदन कर दुष्टों की दुष्टता का अन्त कर दूँगा ! दुराग्रही, मिथ्यावादियों का अस्तित्व संसार से खोकर, पृथ्वी को पवित्र बनाऊँगा !

(धनुष चढ़ाते हुए)—बाणों की-अजय-अग्नि से, सन्देह जला दूँगा
दुष्टों की शक्तियों को मिट्टी में मिला दूँगा !
आकाश को फाड़ूँगा, धरती को हिला दूँगा !!
मिथ्या-कुवादियों का सब तर्क भुला दूँगा !!
वाणी में हलाहल है, मैं उसको निचोड़ूँगा !
जो भ्रांति उठेगी उसे जीवित नहीं छोड़ूँगा !!

राम०—(गंभीरता से) भूल रहे हो, लक्ष्मण भाई ! सीता के पवित्र दुलार ने तुम्हारी राजनैतिक बुद्धि को ढक दिया है। निरीह-प्रजा पर बल-प्रयोग करना, राजा का कर्तव्य नहीं, अन्याय है ! शक्ति के बल पर कभी कोई किसी को नहीं दबा पाया ! शासन की महानता शरीर पर नहीं, हृदय पर राज्य करने में है !

लक्ष्मण—(कातर स्वर में) परन्तु भैय्या ! महासती सीता……!

राम०—(बात काट कर) हाँ, मैं महासती, प्राणेश्वरी सीता को ठुकरा सकता हूँ !

लक्ष्मण—(उतावली के साथ) और मेरे प्रेम, मेरी प्रार्थना को ?

राम०—(गंभीर स्वर में) उन्हें भी ठुकरा सकता हूँ ! किन्तु अपनी मूक-प्रजा की करुण-पुकार को, देश की आवाज को, नहीं ठुकरा सकता—लक्ष्मण ! मैं उसके लिए अपने प्राणों को उत्सर्ग कर सकता हूँ।

लक्ष्मण—(रोते हुए) क्या कह रहे हो—भैया ? एक बार सोच कर तो बोलो ?

राम—(दृढ़ स्वर में) न रोओ लक्ष्मण ! कर्तव्य रोना नहीं, साहस चाहता है ! मैं जो कह रहा हूँ—सोचकर ही कह रहा हूँ। कर्तव्य की कसौटी पर उतरने के लिये—प्राणों से प्यारी सीता को, स्नेह-पूर्ण भाई लक्ष्मण की प्रार्थना को ठुकराना ही पड़ेगा !

टल जाए नाग कर्म से, अमृत उगल सके !
टल जाए सूर्य ताप से, निश को निकल सके !!
टल जाए मृत्यु, भाग्य की रेखा बदल सके !
सम्भव नहीं कि राम का मन प्रण से टल सके !!

(काग़ज़ देते हुए) यह लो ! सीता-बनवास का आज्ञा-पत्र !

[लक्ष्मण रोते हुए काग़ज़ हाथ में लेता है। पर्दा फिर मिल जाता है—पटाखे की आवाज़ के साथ]

प्रकाश—देखा ? देखा राम-राज्य का आदर्श ?

महाराज—(भोलेपन के साथ) अवश्य ! मेरे प्यारे बच्चे ! तुम मेरी आँखें खोल रहे हो, मुझे बतला रहे हो कि हम जिनकी सन्तान हैं, वह कौन थे ? क्या थे ? क्या रास्ता था—उनका ?

वजीर—(क्रोध से) धोखा ! धोखा !! इन्द्रजाल !!! महाराज किधर ध्यान दे रहे हैं ? (ज़ोर से) पकड़ो, पकड़ो ! क़ैद करो ! क़ैद करो—विद्रोही को ! क़ैद……!

[नैपथ्य से जंगली का सिपाहियाने ड्रेस में आना, प्रकाश का वीरता के साथ झण्डा लेकर आगे बढ़ना, महाराज चुप देखते रहते हैं ! वजीर उठ खड़ा होता है]

प्रकाश—(ज़ोर से) ख़बरदार ! एक बेक़सूर देश-भाई पर ज़ुल्म करने के पहिले, अपने दिल से पूछो, वह क्या कहता है ?

(जंगली रुक कर पीछे हटता है)

वज़ीर—(तमक कर) क़ैद करो ! क़ैद करो ! क्या देखते हो—क़ैद करो !

जंगली—(गम्भीरता से) न होगा, मुझसे न होगा—यह पाप !

धड़कता है दिल, काँपती है ज़ुबाँ ये—
न आँखों में ताक़त, न हाथों में दम है !
है बाक़ायदा जिस्म सारा हो जिन्दा—
मैं बढ़ता हूँ लेकिन न बढ़ता क़दम है !!

वज़ीर—(झुँझलाकर) मर ! मर कम्बख़्त ! (जेबों में हाथ डालते हुए) कहाँ है ? कहाँ गया मेरा पिस्तौल ?

प्रकाश—(दृढ़ स्वर में)

ज्वाला तू देखता रहा ख़ूँ-रेज़ी की हिंसा की !
अब देखले ताक़त तू आँखों से अहिंसा की !!

(प्रकाश उसी तरह झण्डा लिए हुए जत्थे सहित जाता है—गाते हुए—'है जान से बढ़कर देश हमारा')

(सब एकटक खड़े रह जाते हैं)

—ड्राप—

दूसरा-अङ्क

पहिला-दृश्य

[स्थान—राजपथ, एक लम्बा-सा बोर्ड रक्खा हुआ है। राही आते हैं, पढ़ते हुए चले जाते हैं, कुछ खड़े रहते हैं! एक फटी हुई कमीज़ पहिने जैन्टिलमैन बेकार युवक का प्रवेश]

बेकार-युवक—(खीजकर) वाहरी तक़दीर! ख़ुदा जाने किस साँचे में ढालकर तुझे बनाया और किस बुरी शायत में—मेरे साथ तेरा गठ-बन्धन हुआ। बाप की कमाई और अपनी तन्दुरुस्ती के बदले में जब बी० ए० की डिगरी लेकर आया तो नोवैकैन्सी के अन्धेरे ने आँखों को अन्धा बना दिया! आख़िर ख़ुदकुशी पर फैसला ठहरा, मगर बदक़िस्मती ने मौत को भी सर्विस से कम साबित न होने दिया। जैसे ही लाइन पर लेटा कि ड्राइवर की तेज़ आँखों ने देख लिया, और गाड़ी खड़ी हो गई। मुख़्तसर यह कि मजिस्ट्रेट की बेकार-हमदर्दी ने जेल के भीतर जाने का मौक़ा भी हाथ से छीन लिया! और बना दिया गया—हज़रत को एकदम बेकार! आज ज़हर ख़रीदने के लिये भी पैसे नहीं हैं! ओफ़! मौत भी मोल बिकती है। उसके लिए भी पैसे चाहिये। अब मैं हूँ, फ़ाक़ामस्ती है, और हैं—(फटी कमीज़ को हाथ से सँभालते हुए) यह हाल!

या मददगार तू अब मौत को आसान बना!
अब तो बेकारों का दुनिया में ठिकाना न कहीं!!

(बोर्ड की ओर देखकर) हँय ! यह बोर्ड कैसा ?—(पढ़ता है) 'शाही-ऐलान—पाँच हज़ार रुपये उस शख्स को इनाम दिये जायेंगे, जो विद्रोही 'प्रकाश' को जिन्दा या मुर्दा दर्बार में हाजिर करेगा। ब-हुक्म महाराज अजितसिंह के;···वज़ीर रणधीरसिंह !'

(साँस लेकर) पाँच हज़ार ? पाँच हज़ार रुपया !! काश ! अगर यह पाँच हज़ार रुपये मुझे मिल सकते !

परेशानी का मज़मा .खुद-ब-.खुद बेकार हो जाता !
कि इस दुनिया में जीने का मुझे अधिकार हो जाता !!

(उदास भाव से प्रस्थान)

(पटाक्षेप)

दूसरा दृश्य

[स्थान—वज़ीर का कमरा ! सामने पलंग पड़ा है, एक कुर्सी रखी है ! वज़ीर बेचैनी के साथ चहल क़दमी कर रहा है]

वज़ीर—(स्वगत) मुसीबत ! मुसीबत !! चारों ओर मुसीबत !!! कैसा अन्धकार है ? कैसी वेदना है ? कैसा हाहाकार मच रहा है—ओफ़ ! कान के पर्दे फाड़े डालता है ! कौन है ? कौन है ?······ओह ! कैसा जादू था—कैसी शक्ति थी, कैसा तेज था ? कोई कुछ नहीं कर सका । दर्बार से साफ़ निकल गया ! पिस्तौल जेब में पड़ा रहा और न मिला ! हाथों में बिजली सी दौड़ गई ! शरीर काँप उठा । और वह बचकर निकल गया । कहाँ गया ? कहाँ गया ? वह दुष्ट ! पकड़ो-पकड़ो क़ैद करो उसे !

(जंगली का प्रवेश)

जंगली—(अदब के साथ) बा-क़ायदा ! कौन है ?—कहाँ है ? सरकार !

वजीर—(हँसी के ढंग में) कुछ नहीं, हवा थी—जंगली, निकल गई !

जंगली—(भोलेपन के साथ) हवा से बाक़ायदा बात कर रहे थे, हवा नहीं बँधेगी—मालिक ! (स्वगत) यह कहो—हवा से नहीं, गुनाहों से बातें कर रहे थे, अपने पापों से बातें कर रहे थे।

वजीर—(बेचैनी के साथ) जंगली ! जंगली !! बता सकते हो ?

जंगली—(झुककर) बा-क़ायदा…!

वजीर—वह कौन था ? क्या सिफ़त रखता था ? जिसने मजबूत हाथों को मुर्दा बना दिया, उठे हुए हथियारों को रोक दिया ! और…

जंगली—कौन था ? बाक़ायदा आदमी था—हुजूर !—आदमी !

वजीर—(ताज्जुब से) आदमी ? आदमी तो मैं भी हूँ ! लेकिन…………

जंगली—(गम्भीरता से) फ़र्क़ है ! तुम मारते हो, वह मरता है ! तुम हैवानी ताक़त रखते हो, वह इन्सानी ताक़त !

वजीर—(आश्चर्य से) यानी………!

जंगली—(गम्भीर होकर) सत्य और अहिंसा ! जिस सत्य और अहिंसा को लेकर जैन-सम्प्रदाय को कायर और बुज़-दिल कहा जाता था, आज उसी सत्य और अहिंसा के क़दमों में राष्ट्र का राष्ट्र सिर झुका रहा है ! अपनी कामयाबी के लिए उसी को सफल और बा क़ायदा समझ रहा है !

ये वह ताक़त है जो हैवानियत को चाक़ करती है !
मुहब्बत में डुबोकर आत्मा को पाक करती है !!
मिटा देती है दिल से बदगुमानी के उसूलों को—

कि जुल्मों की अलामत को जलाकर खाक़ करती है !!

वज़ीर—(उपेक्षा से) क्या बक रहे हो ? अहिंसा की ताक़त तलवार के घाट उतार दी जायगी—जंगली ! वह कोई हो, मुझसे नहीं जीत सकता ! (पिस्तौल हाथ में लेकर)

मैं इस ताक़त को रखता हूँ जो परिचय आप देती है।
गरजती है बरषती है, कलेजा चाट लेती है ॥

जंगली—हार जाओगे—सरकार ! बाक़ायदा हार जाओगे ! उसके पास वह ताक़त है, जो तुम्हारी ताक़त से बड़ी है, जबर्दस्त है ! क्या आप नहीं जानते कठोर बांस को काट डालने वाला फर्सा, मुलाइम रुई को नहीं काट सकता। जिसके सबब शेर और बकरी एक घाटी पानी पीते हैं ! जिस अहिंसा भावना के कारण खूँखार जानवरों के बच्चे जीते हैं।

(दूसरी ओर से दो नकाबपोश सुनीता को बेहोशी की हालत में लाकर पलंग पर लिटा देते हैं !

वज़ीर—(खुशी के साथ) आगई ! आगई मेरी कामयाबी ! मेरी खुश क़िस्मती ? मेरी दिली मुराद ! (नकाबपोशों से) मेरे फ़र्माबर्दारों ! यह लो (दोनों को नोट देता है) अपनी जाँफिशानी का इनाम ! (जंगली से) जंगली ! पहरे पर होशियार रहो।

जंगली—जो हुक्म ! (स्वगत)

मैं खबरदार रहूँ आप रहें गफ़लत में !
ऐशो इशरत न बदल जाए ए मुसीबत में !!
बात बाक़ायदा हो उसको मानलो फ़ौरन—
फ़र्क क्या ? अपनी और दूसरे की इज़्ज़त में !!

(सबका जाना)

वज़ीर—(उन्मत्त होकर)

है खुद तो सो रहा यह रूप जिसने सितम ढाया है।
जगाकर मेरी ख्वाहिश को, मुझे पागल बनाया है॥
है कैसी खुशनुमा सूरत, कि मुश्किल है बयाँ जिसका।
जमी पर चाँद ही गोया फ़लक़ से उतर आया है।

उठ! उठ! मेरे अरमानों की दुनिया!—उठ! आँखें खोलकर देख! रसीली-चितवन का शिकार तेरे क़दमों में झुका जा रहा है! [हाथ से छूता है] बेहोश ?…बेहोश हो ? अभी होश में लाता हूँ!…

हो नहीं बेहोश तुम, केवल जुबाँ खामोश है!
दरअसल देखो, दिल-नादां मेरा बेहोश है!!

(जेब से कुछ निकालकर सुँघाता है! सुनीता एक दो करवट लेकर उठ बैठती है।)

सुनीता—(आश्चर्य से) मैं कहाँ? मुझे यहाँ कौन लाया?

वज़ीर—(कुर्सी पर बैठे हुए) मेरी ताक़त! मेरी मुहब्बत!! सुनीता! याद करो, उस दिन तुमने मेरा अपमान किया था। आज अगर मैं चाहूँ, तो उसका बदला ले सकता हूँ! लेकिन नहीं, मैंने तुम्हें इसलिए नहीं बुलाया!……

सुनीता—(डरते हुए) फिर किसलिए बुलाया है?

वज़ीर—(दृढ़ता से) इसलिए बुलाया है, कि तुम अपनी ज़िद को छोड़दो, इसलिए बुलाया है, कि तुम सीधे रास्ते पर आ जाओ! और इसलिए बुलाया है, कि मेरी बातें मान लेने में अपनी भलाई और शान समझो!

सुनीता—(मज़बूत स्वर में) शान समझूँ? अपने ही हाथों अपना गला घोंटने में शान समझूँ? अपने ही चिराग़ से अपना घर जला डालने में शान समझूँ? असम्भव! एक दम असम्भव!

ये आ नहीं सकते क़दम काँटों की राह में !
तुम देखा करो ख्वाब, अपने ख्वाब गाह में !!
जो .जुल्म, जो ताक़त को लगाओ, लगा सको—
सब जल के खाक़ होंगे वे अबला की आह में !!

वजीर—(नर्मी से) देखो सुनीता ! मैं अपने तरीक़े पर तुम्हें समझा रहा हूँ ! एक शाने-बुलन्द आफ़ीसर की मर्जी के खिलाफ़ चलना तुम्हारे लिये अच्छा नहीं हो सकता ! याद रक्खो—मेरी इच्छा का सन्मान करना—अपने को महारानी बनाना एक बात है !

सल्तनत और हुकूमत की अमलदारी ये !
बा-अदब होगा खड़ा सामने पुजारी ये !!

सुनीता—(क्रोध से) शर्म ! शर्म करो वजीर साहेब ! राजा, प्रजा का पिता होता है। पिता, पुत्री पर कुदृष्टि नहीं करता। लेकिन तुम वही पाप करने के लिये तैयार हो रहे हो ! उसी आग में जल मरना चाहते हो, जो नाम तक शेष नहीं छोड़ती ! डरो, डरो ! गुनाहों से डरो, परमात्मा से डरो !

वजीर—(ज़ोर से हँसकर) डरूँ ? किससे डरूँ ? परमात्मा से ? कहाँ हैं, परमात्मा पाखण्डियों का मायाजाल ?

सुनीता—(स-क्रोध) सँभल, सँभल ! ओ, अहंकारी-नास्तिक ! सँभल, परमात्मा-सी पवित्र-सत्ता के लिये ज़हर न उगल ! परमात्मा की शक्ति, परमात्मा की ज्ञान-दृष्टि संसार के कौने-कौने में फैल रही है ! पृथ्वी, जल, वायु और आकाश सभी उसकी महानता का मनोहर-संगीत गा रहे हैं ! प्राणों की पवित्र झनकार परमात्मा के गुणानुवाद में लीन हो रही है।

वज़ीर—(उपेक्षा से) ख़ामोश ! यह झूठी और मीठी बातें मेरे दिल को नहीं हिला सकतीं ! अगर परमात्मा है, तो मुझे बताओ कहाँ है ?

सुनीता—(कठोर स्वर में) कहाँ हैं ?...जहाँ एक दूसरे की जान का कोई ग्राहक नहीं ! जहाँ मौत और पैदायश का सवाल नहीं ! जहाँ जुल्मो सितम की पुकार नहीं ! आज अगर तू अपने हृदय की आवाज़ पर ध्यान दे—भलाई और नेकी की राह पर क़दम बढ़ाये—तो तू भी परमात्मा हो सकता है !

वज़ीर—(अट्टहास के साथ) मैं परमात्मा ?...मैं परमात्मा ? हा ! हा !! हा !!!

सुनीता—(गंभीर स्वर में) न भूल ! न भूल ! अत्याचारी ! तुझ से भी अधिक पापी, दुराचारी, ख़ूनी, लुटेरे परमात्मा की कृपा से परमात्मा बन गए—दुनिया के तूफ़ानी समुन्दर से पार चले गए !—

जब तेरी बदकारियों का ख़ात्मा हो जायेगा !
तब तेरा ही 'आत्मा' परमात्मा हो जायेगा !!

वज़ीर—(रुआब के साथ)—बन्द करो सुनीता अपनी बकवास ! जिस तरह शेर के पन्जों में ताक़त होती है, मेंढ़े के माथे में ताक़त होती है, और घोड़े के पिछले पैरों में ताक़त होती है, उसी तरह औरतों की ज़ुबान में ताक़त होती है ! मैं तुम्हारी ज़ुबान की ताक़त देखने के लिए नहीं, अपनी ताक़त से तुम्हारी ज़िद की चट्टानों को चूर-चूर करने के लिए बैठा हूँ ! बोलो......? क्या मेरे प्रेम-प्रस्ताव को अस्वीकार करती हो ?

सुनीता—(दृढ़ता के साथ) एक बार नहीं, हजार बार अस्वीकार!

बहरी हूँ, बातें पाप की हरगिज न सुनूँगी!
सच्चाई और धर्म के रास्ते पै रहूँगी!!
हूँ भारतीय-बालिका, ये धर्म है मेरा—
देदूँगी जान अपनी पर ईमान न दूँगी!!

वज़ीर—(प्यार से) मेरे प्यार की ओर देख!

सुनीता—(तनक कर) मेरी फटकार की ओर देख!!

वजीर—(नर्मी से) मेरी तबियत की ओर देख!

सुनीता—(तेजी से) मेरी मुसीबत की ओर देख!!

वजीर—(झुँझलाकर) मेरी शान की ओर देख!

सुनीता—(तमक कर) मेरे ईमान की ओर देख!!

वज़ीर—(क्रोध से) मेरी ताक़त की ओर देख!

सुनीता—(दृढ़ता से) मेरी हिफ़ाजत की ओर देख!

वज़ीर—(क्रोध से) देखूँगा, मेरी ताक़त के आगे कौन तेरी हिफ़ाज़त करने की गुस्ताखी अदा करता है!

सुनीता—भूलता है—भूलता है घमंडी! मारने वाले से बचाने वाले की ताक़त कहीं ज्यादह होती है।...तू अपने दो हाथों से मुझे मारेगा, और मेरा बचाने वाला मुझे हजार हाथों से बचायेगा!—

बचायेगा वही जिसने करिश्मा कर दिखाया था!
नराधम कौरवों से द्रोपदी-माँ को बचाया था!!

याद कर! विवेक से काम ले—

क्या नहीं तूने सुनी, सीता कहानी बन गई?
शील की ताक़त के आगे आग पानी बन गई!!

वज़ीर—(जोर से) ग़लत! याद रख, सुनीता! मैं तेरी इन मीठी २ बातों से नहीं टल सकता! अब समझले—एक

ओर मौत है, दूसरी ओर मेरा हुक्म ! (पिस्तौल हाथ में लेकर) बोल, किसे पसन्द करती है ?

सुनीता—(ख़ुशी से) मौत ! एक भारत-सन्तान अपने धर्म को खोकर ज़िन्दा रहने से, धर्म पर मरना हज़ार बार पसन्द करती है !······

ओ, सितमगर ! देखता क्या है खड़ा तू, वार कर !
मेरी दुनिया को उठा, इस पार से उस पार कर !!

[स्वगत आकाश की ओर] टूट पड़ो ! टूट पड़ो—सितारो ! फट जाओ—वसुन्धरे ! क्या देखती हो ?—एक निरीह अबला की हत्या ? यह क्या हो रहा है ?आश्मान ज्यों का त्यों है, हवा चुप है, पृथ्वी शाँति के साथ पड़ी हुई है ? हँय ! कोई कुछ नहीं करता ? समझो ! समझो !! अत्याचार देखते-देखते यह सब आदी हो गए हैं ! अन्याय के विरुद्ध बोलने की इनमें भी ताक़त नहीं रही ! न सही, मगर मेरा परमात्मा मुझे बल देगा ! (दोनों हाथ फैलाकर ऊपर की ओर) प्रभु ! कहाँ हो ?—कहाँ हो ?—एक अस्मत का लुटेरा तुम्हारी दासी के प्राण लूट रहा है ! तुम कहाँ हो?—

वज़ीर—(हँसकर)—

रोओ, चीखो, चिल्लाओ तुम, लेकिन बेकार ही जायेगा !
है ताक़त इतनी किसमें जो, यों मौत से लड़ने आयेगा !!

सुनीता—

तुम सुनो न सुनो ग़रीबों की, लेकिन वह सब की सुनता है !
तुम उसे भुला बैठो चाहे, वह तुम को भूल न सकता है !!

वज़ीर—(क्रोध मे पिस्तौल का निशाना बनाते हुए) तो आए बचाने वाला ! देखूँगा—किस तरह तुझे बचाता है ! एक—दो—

(इसी समय ऊपर से प्रकाश कूद पड़ता है, दूसरे ही झटके में वज़ीर का पिस्तौल हाथ से दूर जा गिरता है)

प्रकाश—(तेज़ी से)—सावधान !

जब मारने वाला पशुता को खुश हो हो कर अपनाता है !
तब विवश बचाने वाला भी इस तरह बचाने आता है !!

वज़ीर—(काँप कर) कौन ?—प्रकाश !

प्रकाश—(दृढ़ स्वर में) हाँ ! अगर तुम अन्धकार हो, तो मैं प्रकाश हूँ ।

वज़ीर—तुम कोई हो, लेकिन अब ज़िन्दा नहीं लौट सकते !

प्रकाश—परवाह नहीं !—

यह जान रहे न रहे लेकिन, मेरे गौरव की शान रहे !
दुनिया का मैं उपकार करूँ, जीते जी तक यह ध्यान रहे !!

[पिस्तौल उठाने के लिए वज़ीर बढ़ता है, प्रकाश रोकता है । देर तक छीना झपटी होती रहती है । प्रकाश को चोट लगती है । वज़ीर को धक्का लगता है—ज़ोर से गिरता है । सिर से ख़ून निकलता है—बेहोश हो जाता है ! प्रकाश सुनीता को लेकर भाग जाता है ! नैपथ्य में वाद्य बजता रहता है]

—पटाक्षेप—

तीसरा-दृश्य

[स्थान—रमणीक-जंगल ! रिमझिम-रिमझिम मेह पड़ रहा है ! सुनीता और प्रकाश का गाते हुए प्रवेश]

(सम्मिलित गायन)

दोनों—हम हिल-मिल खेल रचाएँ !

सुनीता—तुम बन जाओ डगमग सागर,
मैं बन जाऊँ नैय्या !

प्रकाश—लेकर तब पतवार प्रेम की,
जीवन पार लगाएँ !!

दोनों—हम हिल-मिल खेल रचाएँ !

प्रकाश—फूल बनो तुम कोमल सुन्दर,
मैं .खुशबू बन जाऊँ !!

दोनों—अपनी .खुशबू सुन्दरता से—
दुनियाँ को महकाएँ !
हम हिल-मिल खेल रचाएँ !

सुनीता—देव बनो तुम मन-मंदिर के,
दासी मैं बन जाऊँ !
प्रेम-प्रसाद चढ़ाऊँ दिन दिन—

दोनों—जीवन सरस बनाएँ !
हम हिल मिल खेल रचाएँ !

सुनीता—(आनंदित होकर) कैसा धन्य दिवस है ? आकाश पर काले-काले बादल चक्कर काट रहे हैं, जैसे किसी को ढूँढ़ रहे हैं।

प्रकाश—तुमने ठीक ही कहा—सुनीता ! 'किसी को' ढूँढ़ रहे हैं—इसीलिए ढूँढ़ रहे हैं कि अकेले का जीवन एक बोझ होता है ! (बिजली कौंधती है) वह देखो ! काले-काले बादलों ने आखिर अपना साथी खोज ही लिया ! (आकाश की ओर) बादलो ! गरजो ! गरजो ! .खुशी से नाच उठो ! तुम जीवन प्याली में अमृत घोल रहे हो ! आज सौदामिनी तुम्हारे दामन में मुँह छिपाकर मुस्करा रही है ! (सुनीता से) देखती हो सुनीता !

बिजली और बादल के प्रेम-सम्मिलन पर आकाश जल वृष्टि कर रहा है! समीर के ठण्डे-ठण्डे झोंके तालियाँ बजा रहे हैं!...(प्रकाश चुप रह कर कुछ सोचने लगता है)

सुनीता—(प्रेम-पूर्ण स्वर में) क्या सोचने लगे—प्रकाश ?

प्रकाश—(गंभीरता से) कुछ नहीं! कल्पना की दृष्टि एक स्वप्न देख रही है।

सुनीता—क्या स्वप्न देख रही है ?

प्रकाश—(मुस्कराकर) न पूछो सुनीता! जो देख रही है वह वर्तमान से दूर है! मौजूदा वक्त से अलग की बात है।

सुनीता—(साग्रह) फिर भी—

प्रकाश—(प्रेम-पूर्ण स्वर में) देख रही है—कि मेरे सिर पर राज-मुकुट रखा गया है! सारा साम्राज्य मेरे चरणों में झुक रहा है!

सुनीता—(उत्सुकता से) और.........?

प्रकाश—(गंभीर स्वर में) और ? और मैं तब जीवन को मधुर बनाने के लिए एक साथी की खोज में लीन होने जा रहा हूँ! लेकिन मूर्ख बादलों की तरह मुझे चक्कर नहीं काटने पड़ते! इधर-उधर घूमने की तकलीफ नहीं उठानी पड़ती!

सुनीता—(भोलेपन के साथ) तो...?—

प्रकाश—(उल्लास भरे स्वर में) सौदामिनी से भी अधिक चंचल, बिजली से भी ज्यादह चमकदार और लजीली मुझे अनायास मिल जाती है! मैं उसे हृदय के सिंहासन पर बैठा कर अपने को सुखी मानने लगता हूँ!

सुनीता—(जिज्ञासा से) फिर...?

प्रकाश—(सप्रेम) फिर ? स्वप्न भंग हो जाता है ! लेकिन मेरी हृदयेश्वरी—मेरे कल्पना-लोक की रानी—फिर भी मैं देखता हूँ, कि मेरे पास है !

दूर कोई भी नहीं है प्रेम के इतिहास में !
चन्द्रमा के साथ ही है चाँदनी आकाश में !!

सुनीता—(मुदित होते हुए) क्या कह रहे हो, प्रकाश !—कहाँ है—तुम्हारी प्राणेश्वरी ?

प्रकाश—(मुस्कराकर) बहुत पास !

सुनीता—(*साग्रह*) *फिर भी*—

प्रकाश—(*सुनीता की ठोड़ी छूते हुए !*) *ये !!!*

यही है दामिनी जो बादलों का मान रखती है !
यही है चाँदनी जो चन्द्रमा की शान रखती है !!

(दोनों हँसते हैं ! इसी समय बेकार-युवक का प्रवेश)

बेकार-यु०—(स्वगत) यही है ! यही है ! मेरी बेकारी का अन्त ! पाँच हजार रुपये का प्रोमेसरी नोट ! और मेरी कारगुज़ारी का कामयाब नतीजा ! जिसके लिए जंगलों की खाक छानी—वह विद्रोही प्रकाश यही है !—यही है !!

(प्रकाश चौंक कर देखता है)

प्रकाश—(दृढ़ स्वर में) हाँ ! तुमने ठीक ही पहिचाना, मैं ही प्रकाश हूँ—मेरा ही नाम प्रकाश है ! कहो भाई ! क्या चाहते हो ?

(प्रकाश आगे बढ़ता है, युवक पीछे हटता है)

डरो मत, इधर आओ ! बोलो, तुम क्या चाहते हो ?

(युवक अपने फटे कपड़ों की ओर देखता है)

प्रकाश—(नर्मी से) रुपये चाहते हो, पाँच-हजार रुपये ! (कातर-स्वर में) ओफ, बेकारी ! तूने आज मनुष्य की मनुष्यता छीन ली है ! उसको बुद्धि पर मुसीबतों के पर्दे डाल रक्खे हैं ! वह नहीं सोच सकता कि उसे क्या करना चाहिए—क्या नहीं ? आज प्राण घातक-बेकारी देश को रसातल पहुँचाने में भागीदार बन रही है। (युवक से) चलो भाई ! मैं तुम्हें पाँच हजार रुपए दिलवाऊँ।

सुनीता—(विह्वल कण्ठ से) कहाँ चले ?

प्रकाश—(गम्भीर स्वर में) एक देश-भाई का भला करने !

सुनीता—(आँसू पोंछते हुए) और मेरा प्रेम ?

प्रकाश—(गम्भीर स्वर में) तुम्हारा प्रेम, मेरे देश-प्रेम को नहीं जीत सकता ! दुखित न हो आ सुनीता ! मेरे हृदय में देश-प्रेम के लिए पहिला स्थान है ! जो एक सच्चे देश-वासी का कर्तव्य होता है !

देश भाई की मुसीबत पर न जिसका ध्यान है !
सिर्फ़ कहने के लिए इन्सान वह इन्सान है !!

(सुनीता रोती हुई पीछे भागती है)

— पटाक्षेप —

चौथा-दृश्य

[स्थान—सुधा-वेश्या का घर ! पलंग पर वजीर रणधीरसिंह लेटे हैं ! सिर में पट्टी बँधी है। आप ही आप कराहते हैं, बड़बड़ाते हैं ! बेहोशी-सी छा रही है ! सुधा दूर खड़ी सुन रही है, उसके चहरे पर परिवर्तन होता रहता है।]

वज़ीर—(स्वगत) निकल गई, निकल गई ! यकायक मेरे हाथ से निकल गई ! आह ! आह !! वह. कैसी सुन्दर थी, कैसी खूबसूरत थी—गोया बहिश्त की परी थी ! मेरे दिल की बेगम थी, मेरे अरमानों की दुनिया थी ! निकल गई ! निकल गई, एक दम निकल गई !···ओ···ओफ़ ! बड़ी तक़लीफ़ है, बड़ा दर्द है ! सिर में आग जल रही है ! शरीर में आग जल रही है, चारों ओर आग—आग—आग धधक रही है !···(क्षण भर चुप रहकर) सुनीता ! सुनीता !! तुम कहीं चली जाओ, लेकिन मेरे हाथ से नहीं बच सकतीं ! मैंने तुम्हें वचन दिया है, हृदय दिया है कि तुम्हें अपनी महारानी बनाकर ही छोड़ूँगा ! यह मिट नहीं सकता, मैं राजा बनूँगा, ज़रूर राजा बनूँगा ! तुम मेरी ताक़त नहीं जानतीं··(ज़ोर से) तुम मेरी ताक़त नहीं जानतीं !!

सुधा—(पास आकर) चिल्लाइए नहीं ! आराम से लेटे रहिए—मैं आपकी ताक़त जानती हूँ ! आपकी कोई ताक़त मुझसे छिपी नहीं है !

वज़ीर—(घबड़ाकर आँखें खोलकर) कौन ? कौन ? सुधा !··· कहो, कहो, तुमने क्या सुना ? क्या सुना ? भूल जाओ, भूल जाओ ! मैंने जो कुछ कहा, सब पागलपन था—बेहोशी थी, झूँठ था ! सब ग़लत था !! ओफ़ ! ओफ़ तक़लीफ़ ने मुझे पागल बना दिया है—सुधा ! मैं पागल हूँ—पागल !

सुधा—(शान्ति से) वज़ीर साहिब ! आप जैसे हैं, बने रहिए ! लेकिन ख़ामोश ! अभी आपको आराम की ज़रूरत है !

(वज़ीर आँखें मीचकर लेट रहता है)

सुधा—(अलग हटकर—स्वगत) धोखा ! धोखा !! चालबाजी, मेरे साथ भी चालबाज़ी ? हैरत ! हैरत !! मैं नहीं समझी थी—तू इतना बे-वफ़ा है, इतना कमीना है, इतना दग़ाबाज़ है ! मगर समझले—तू कितना ही चालाक क्यों न हो, कितना ही होशियार फ़रेबी क्यों न हो, एक वेश्या से नहीं जीत सकता ।

रईसों को दिलेरों को जो उँगली पर नचाती हैं !
जो आँखों वालों को बेहोश कर अन्धा बनाती है !!
उसी से चाल चलकर आग से तू खेल खेला है—
समझ रख आग में पड़ता है, वह उसको जलाती है !

तू दुनिया की आँखों में धूल झोंक सकता है, लेकिन एक वेश्या की आँखों को बन्द नहीं कर सकता ! याद रख, याद रख कमीने कुत्ते ! मेरे साथ चाल खेलकर तू भी सल्तनत नहीं पा सकेगा ! सल्तनत के बदले तुझे फाँसी मिलेगी—मौत की सज़ा मिलेगी ! भूल जा, भूल जा ! अपनी घमण्डी और शरारत-भरी चालाकियों को भूल जा ! (गम्भीर स्वर में) तू नहीं जानता कि तेरी जिंदगी मेरी मुट्ठी में बन्द है ! मुट्ठी खोलते ही तेरी जिंदगी कपूर की तरह उड़ जायगी । मौत की गोद में जा लेटेगी !

तेरी चालाकियों को एक पल में काट दूँगी मैं !
जो खोदी कब्र है तूने उसी में पाट दूँगी मैं !!
तेरी तक़दीर से बदफेल तेरे ही लड़ा दूँगी !
न भूलेगा तू मरने तक सबक़ ऐसा सिखा दूँगी !!

(जाती है)

वज़ीर—(करवट लेकर स्वगत) बचाओ ! बचाओ ! मुझे बचाओ ! सुधा ···! सुधा ! मुझे बचाओ ! बे-कुसूर जागीर-

दार की आत्मा मुझे खाने आ रही है। मैं हाथ जोड़ता हूँ! मुझे छोड़ दो, मुझे छोड़ दो! अब नहीं किसी को मारूँगा, मैं ख़ुद मर रहा हूँ! जिन्दगी हराम हो रही है! मुझे छोड़ दो…! (उठता है, आँखें खोलकर चारों ओर देखता है) हँय! यहाँ कोई नहीं है? ख्वाब देखा था—स्वप्न देखा था—वाह—वाह! (हँसता है)

— पटाक्षेप —

पाँचवाँ–दृश्य

[स्थान—दर्बार! महाराज अजितसिंह सिंहासन पर बैठे हैं! वज़ीर रणधीरसिंह शराब की बोतल प्याली में उँडेल रहा है।]

महाराज—(मुँह मोड़कर) एक बार, दो-बार, हज़ार बार कह चुका कि अब मैं नहीं पीना चाहता! तुम ज़िद क्यों करते हो? मुझे अब अपना दिमाग़ सही कर लेने दो, देश की ख़बर लेने दो! मुझे जान लेने दो कि मैं राजा हूँ!

वज़ीर—(हँसकर) कैसी बातें कर रहे हो—महाराज? दुनिया कह रही है कि आप राजा हैं! आप स्वयं भी जानते हैं कि आप राजा हैं! इन उलझनों में न पड़िये, छोड़ दीजिए इन झंझटों को! लीजिए—(जाम देता है)

पीजिए ये जामे-शर्बत, लुत्फ़ का पैग़ाम है!
दूर करना झंझटों से, इसका पहिला काम है!!

महाराज—(हाथ में जाम लेकर) नहीं सुनते? मैं कह रहा हूँ उसे नहीं सुनते वज़ीर साहब! मुझे अब ये बातें बुरी लगना महसूस होने लगी है! मुझे अब तुम्हारा ये रवैया पसन्द नहीं! बदल डालो—बदल डालो! अगर

मैं राजा—हूँ तो तुम्हें हुक्म देता हूँ—कि इस रवैये को बदल डालो !

वज़ीर—(स्वगत) यह क्या ?

जिसे मैं ख़ाक समझे था वह निकला आग का शोला !
कि मुर्दा जिसको जाना था वह जिन्दों की तरह बोला !!
ये ग़लती थी कि मैंने ख़ात्मा तेरा नहीं सोचा—
यही सोचा, यही सोचा कि भोला है निरा भोला !!

मगर अब मालूम हुआ कि तुझे भी जिन्दगी से हाथ धोने का शौक पैदा हुआ है ! तेरी मौत भी मेरे ही हाथों तुझे अपनाना चाहती है !

शमा जलता है अपनी रोशनी से जगमगाता है !
जब मरना चाहता है .खुद-ब-.खुद परवाना आता है !!

(महाराज से) जो हुक्म, जहाँपनाह ! जो आप को बुरा लगे वह मुझे अच्छा नहीं लग सकता ! एक वफ़ादार दोस्त, दोस्त की .खुशी में ही अपनी .खुशी मानता है !

तुम्हारी शान के दामन में रहती जिन्दगी मेरी !
तुम्हारी है .खुशी जिसमें उसी में है .खुशी मेरी !!

महाराज—(.खुश होकर) अच्छा, तो लाओ एक जाम और···!

(वज़ीर जाम देता है, महाराज पीते हैं, इसी वक्त प्रकाश का बेकार-युवक के साथ प्रवेश)

प्रकाश—(गरजते हुए)

लो, मुझे चढ़ाओ फाँसी पर, या सितम नया ईजाद करो !
जिस तरह मुनासिब समझो तुम, मेरी हस्ती बरबाद करो !!
मैं जान हथेली पर लेकर, लोगों को सबक़ सिखाता हूँ !
सन्देश संगठन का देकर, जागृति का बिगुल बजाता हूँ !!

अपराध किया है यह मैंने, सोते से देश जगाया है!
जो हक़ उसका था छिना हुआ, मैंने वह उसे बताया है!!
क्या देखते हो, मुझे गिरफ्तार करो! क़ैद करो!
और अपनी शर्त के मुताबिक—ऐलान के मुताबिक—
पाँच हजार रुपये इस बहादुर को इनाम दो!

[वज़ीर ५०००) के नोट मेज़ पर से उठाकर बेकार युवक को देता है। और साथ ही सिपाहियों को बुला कर हुक्म देता है। दो सिपाही आते हैं]

वज़ीर—गिरफ्तार करो!

सिपाही—जो हुक्म! (प्रकाश के हाथों में हथकड़ी और कमर में रस्सी डाल दी जाती है)

प्रकाश—(बेकार युवक से) जाओ भाई! बेकारी का अन्त करो, अपनी मौज की दुनिया बसाओ, और आनन्द करो। मगर बेकारों और ग़रीबों के साथ हमदर्दी दिखाना न भूल जाना!

है क़ायम जिन उसूलों से, ये इन्सानों की इन्सानी!
उसे मत भूलकर करना कभी मज़बूत नादानी!!
दया करना ग़रीबों पर, ये इन्सानी तकाज़ा है—
जो इसको टालता है वह उठाता है परेशानी!!

(बेकार-युवक जाता है)

वज़ीर—(घमण्ड के साथ) जाओ!—
ले जाओ राज-द्रोही को, जंजीरें जकड़ कर!
सब भूल जायें देश-प्रेम, जेल में सड़ कर!!

प्रकाश—(रस्सियाँ झटक कर) चुप रहो चापलूस!—
तुम क्या समझोगे देश-प्रेम की मीठी-मीठी तानों को!
यदि पड़ जाएगी एक लहर पावन कर देगी कानों को!!

यह देश-प्रेम की शोभा है, जो फबती है मरदानों को !
वह कृष्ण-सदन है जेल नहीं, आजादी के दीवानों को !!

[पर्दा फटता है—हिन्दुस्थान का नक्शा दिखाई देता है]

प्रकाश—(जोर से) भारत माता की जय ! जन्मभूमि की जय !!

[सिपाही प्रकाश को ले जाते हैं। भारत माता का नक्शा अदृश्य होता है। वजीर चुप खड़ा रहता है !]

— ड्राप —

तीसरा-अङ्क

पहिला-दृश्य

[स्थान—जेल, फाटक के भीतर प्रकाश जेली-ड्रेस में खड़ा है ! हजामत बढ़ रही है, चेहरे पर गम्भीर भाव हैं। बाहर चार पहरेदार बैठे मौज में संगीत का मजा ले रहे हैं—एकदम मस्त]

—गायन—

तेरे जल्वे में मेरी रहे जुस्तजू !
ऐ प्रभू ! ऐ प्रभू !! ऐ प्रभू ! ऐ प्रभू !!
तुझ से बढ़कर न देखा कोई रहनुमा !
जगमगाता तेरी रोशनी से जहाँ !!
किस में दम, तेरी शौक़त जो करले बयाँ !
तू मुबर्रा है झगड़ों से ऐ पाक-रू ! ऐ प्रभू० ॥१॥

दिल से तेरी इबादत में जो भी लगा !
उसकी बदकरियों का हुआ इन्तहा !!
तेरी तर्जे-रहम से न कोई रिहा !
ज़र्रे-ज़र्रे में तेरी समाई है तू ! ऐ प्रभू० ॥२॥

माना दुनियावी झगड़ों से 'भगवत्' जुदा।
फिर भी पाते हैं राहत मुसीबत ज़दा !!
हर तरफ़ से सुनाई ये देती सदा !
सुनले मेरी भी ग़म से भरी आरज़ू !!
ऐ प्रभु ! ऐ प्रभू !! ऐ प्रभू ! ऐ प्रभू !!३॥

(सिपाही लोग गाना ख़त्म कर फाटक पर पहरा लगाने लगते हैं !)

प्रकाश—(स्वगत) समर भूमि से दूर, देश की भलाई से दूर— मैं कहाँ पड़ा हूँ ? ओ, सीखचों के भीतर आने वाली, आज़ाद-वायु ! मेरा सन्देश पहुँचाओ, देशवासियों से कहो कि वह अपनी क़ुर्बानी की भावना को बढ़ाये रहें, ज़ुल्मों को सहते चले जाएं ! एक दिन होगा जब वह अपनी कामयाबी को सामने देखेंगे ! अपनी मिहनत से भारत की शान को जगमगाते हुए पायेंगे !

ये भारतवर्ष की सन्तानें, गौरव फिर दिखायेंगी !
विरोधी शक्तियाँ स्वयमेव ही, सब हार जायेंगी !!
उधर है ज़ुल्म साधन और है तलवार-हिंसा की !
इधर है सत्य पर श्रद्धा और ताक़त है अहिंसा की !!
जगो ! जगो !! देशवासियों, जगो ! दिखादो हम

उन्हीं माँ की दुलारी सन्तानें हैं, जिन्होंने अपना जीवन देश के लिए हँसते-हँसते दे डाला ! जिनकी पवित्र-कीर्ति से आज संसार का वायुमण्डल भर रहा है। जिनकी छाती चूस चूस कर हम बड़े हुए हैं। जिन्होंने उंगली पकड़कर हमें चलना सिखाया है !

यही है वक्त माँ के दूध को सन्मान देने का !
यही है वक्त अपनी वीरता से नाम लेने का !!

(प्रकाश एक ओर खड़ा चुपचाप, सोचने लगता है। आधा पर्दा फटता है, सामने समरसिंह और सुन्दरी विद्युल्लता खड़ी दिखाई देती है !)

समरसिंह—(प्रेम से) प्रिये ! प्रिये, विद्युल्लते !

विद्यु०—(क्रोध से) चुप रहो समरसिंह ! मैं एक विश्वासघाती,

देश-द्रोही, कुल कलंकी नराधम के मुँह से अपने लिए— 'प्रिये' नहीं सुन सकती ! भूल जाओ—वह स्वप्न, जब हम-तुम दोनों फूल और खुशबू की तरह खेला करते थे !

समर०—(करुण-स्वर में) परन्तु तुमने मुझे वचन दिया था विद्युल्लता ! कि मैं तुम्हारी ही जीवन-संगिनी बनूँगी ।

विद्यु०—दिया था ! परन्तु अब वह बीते हुए समय की तरह व्यर्थ है । इसलिए कि तब तुम देश-द्रोही नहीं थे, विश्वासघाती और हृदय-हीन नहीं थे ! किन्तु आज तुम्हारा हृदय पाप के सागर में डूबा हुआ है । तुम्हारा दामन दम्भ की स्याही से रँगा हुआ है ! और तुम्हारी सूरत मौत से भी खतरनाक बन रही है । मैं नहीं जानती थी—कि तुम यवन-पक्ष से मिलकर, जन्म-भूमि चित्तौड़ को बर्बाद कर डालोगे ? स्वदेश का सर्वनाश करते भी तुम्हारे हाथ न काँपेंगे ?

जो सिर पर देश की बरबादियों का पाप लेता है !
उसे संसार का विद्वान-दल धिक्कार देता है !!

समर—(गर्व के साथ) भूल ! भूलती हो—विद्युल्लते ! मेरा प्रेम, दम्भ नहीं, धोखा नहीं, अटूट-प्रेम है ! मैं प्रेमी हूँ ! तुम्हारे प्रेम के लिए मुझे जन्म-भूमि तो क्या, सारा संसार बर्बाद करना पड़े तो मैं उसके लिए तैयार हूँ !

आँखों में तुम्हीं दिल में तुम्हीं, प्यार में तुम हो !
प्राणों में तुम्हीं, प्राणों के हर तार में तुम हो !!
तुम किसमें नहीं, मौत की तलवार में तुम हो !
इकरार में तुम हो कभी, इनकार में तुम हो !!

विद्यु०—(क्रोध से) चुप रह, कामान्ध ! जिस जन्मभूमि के

जल-वायु से पल कर तेरा ये शरीर बड़ा हुआ है, उसी मातृ-भूमि को क्षणिक-सुख के लिये शत्रुओं के हाथ बेचते तुझे शर्म नहीं आई ?—क्या देख नहीं रहा—चित्तौड़ की स्वतन्त्रता का अपहरण ! अनेकों बच्चे अनाथ बन रहे हैं, सैकड़ों स्त्रियाँ पतिहीन होकर बिलख रही हैं ! स्वदेशाभिमानियों का रक्त पानी की तरह बहा जा रहा है ! ओफ़...! ये देखने के पहिले तेरा हृदय क्यों नहीं फट जाता ? आँखें क्यों नहीं मुँद जातीं ?

जुबाँ ख़ामोश होती है असर काफ़ूर नालों में !
न ताक़त सुनने तक की ही रहेगी सुनने वालों में !!
ये बर्बादे-वतन का दास्ताँ, जब याद आयेगा !
न समझो आज ही तक बल्कि सदियों तक रुलायेगा !!

समर०—(करुण स्वर में) अपराध हुआ ! क्षमा करो विद्युल्लते ! भूल जाओ ! भूल जाओ मेरे गुनाहों को !

विद्यु०—(तेजी से) याद कर ! याद कर, तूने कितना बड़ा पाप किया है ? एक, दो घर में नहीं, सारे देश में हाहाकार भर दिया है । बोल ? बोल ? ऐसा अनर्थ करने की तुझे किसने सलाह दी ? किसने यह रास्ता दिखाया ?

समर०—(दृढ़ता से) किसने सलाह दी ? किसने रास्ता दिखाया ?—पूँछती हो—विद्युल्लते ! सुनो—तुम्हारे प्रेम ने, तुम्हारी हृदय-हारी सुन्दरता ने ! और उस सुन्दरता को अपनी बना लेने की लालसा ने ?

विद्यु०—(आश्चर्य से) मेरे सौंदर्य ने ? मेरे इस रूप ने ? क्या इसी रूप के लिये तूने यह अधर्म किया है ? क्या मेरी सुन्दरता ही देश की बर्बादी की वजह हुई है ?—धिक्कार !

धिक्कार है इस रूप पर, इस रूप की मनुहार पर !
लग गई जो सबल होकर देश के संहार पर !!

(करुण स्वर में) क्षमा करो, माता जन्मभूमि ! मेरे अपराध को क्षमा करो ! नहीं जानती थी, कि—मैं ही तेरे नाश का कारण बनूँगी ! मेरी सुन्दरता ही तेरी डरावनी-मौत बन जाएगी। जननी जन्मभूमि ! मेरे भाल पर देश-द्रोह की कालिमा न लगने दो। मुझे बचालो—अपनी विशाल-गोद में स्थान दो ! मैं तुम्हीं से उत्पन्न हुई, तुम्हीं से सुन्दर बनी ! और अब तुम्हीं में मिलना चाहती हूँ। मुझे अपनी शरण दो ! शरण दो, माता !—अपनी शरण दो !!!

[विद्युल्लता छाती में कटार मार लेती है—खून का फुहारा-सा चलता है।]

समर०—(विह्वल-स्वर में) विद्युल्लते ! विद्युल्लते !! मेरी प्यारी विद्युल्लते !!! [पर्दा फिर मिल जाता है]

प्रकाश०—(वीर स्वर में)—

ये हैं वे वीर-माताएँ, अकथ साहस और ताक़त का !
खुलासा कर रहे इतिहास सारे जिनकी हालत का !
चढ़ाये प्राण हँस हँस कर धरम और देश पर अपने—
किया है जिनने सिर ऊँचा हमेशा भव्य-भारत का !

उठो ! उठो !! नौजवानो ! वीर-माताओं की चाँदनी-सी उज्ज्वल, धूप-सी तेजस्वी कीर्ति को अपनी कायरता बुज़दिली और उदासीनता की कालिमा से मलिन न करो !

है ग़म किसका तुम्हें, सोचो मजालो दारे-फानी में !
बढ़ो आगे, निडर होकर लगादो आग पानी में !!

जो मरते हैं, अमर होते हैं वह नेकी के जरिए से—
जो कर गुजरोगे अपना है, वही इस नौजवानी में!

[जंगली-सिपाही के साथ सुनीता का मिलाई के लिए आना]

प्रकाश०—(चौंककर) कौन ?—सुनीता !

सुनीता—(करुण-स्वर में) हाँ, हतभागिनी, अनाथिनी आपकी सुनीता !

प्रकाश०—(गंभीरता से) मुझ बन्दी के पास क्यों आई हो—सुनीता क्या नर्क में स्वर्ग की तसवीर खींचना है ? जहर को अमृत बनाना है ? या मेरे देश प्रेम को अपने प्रेम के जाल में जकड़ना चाहती हो ?—(मीठे स्वर में) बोलो ? बोलो—रानी ! क्या चाहती हो ? चुप हो ?........रोती हो सुनीता ? ...न रोओ, न रोओ, मैं किसी का रोना नहीं देख सकता ! मेरी आत्मा में तूफ़ान आ रहा है—न रोओ सुनीता ! मेरा कहा मानो, न रोओ ! बताओ तुम क्या चाहती हो—सुनीता ?

सुनीता—(आँसू पोंछते हुए) मुझसे न पूछो प्रकाश ! तुम्हारे सवाल का जवाब तुम्हारा हृदय देगा। उसीसे पूछो कि 'मैं क्या चाहती हूँ !' मेरी क्या इच्छा है ?

प्रकाश०—(अपने आप से) हृदय ? हृदय ! तुम्ही बताओ कि सुनीता क्या चाहती है ? (क्षण भर बाद सुनीता से) समझा ! समझा—सुनीता कि तुम क्या चाहती हो ! तुम चाहती हो कि मैं राज-सत्ता के सामने घुटने टेक कर माफ़ी माँग लूँ ! देश के रास्ते से हट जाने का बचन देकर जेल से बाहर आऊँ और...? और

चाहती हो कि (गाता है) 'हम हिल मिल खेल रचायें !' लेकिन याद रक्खो, जब तक शरीर में प्राण रहेंगे, प्रकाश अपने देश-व्रत से टल नहीं सकेगा ! उसकी भीष्म-प्रतिज्ञा मरते दम तक साथ रहेगी !...

है किसमें इतनी ताब जो प्रण को भुला सके !
गर्दन झुकी हुई पै दुधारा चला सके !!
चल जाए दुधारा भी, बहे खून भी मेरा—
है मुझको खुशी देश के जो काम आ सके !!

सुनीता—(करुण-स्वर में) प्रकाश ! प्रकाश निष्ठुर न बनो मेरी ओर देखो, मुझ अनाथ का इस संसार में कहीं ठिकाना न रहेगा। वज़ीर रणधीरसिंह की दुष्टता मुझे मौत के घाट उतार कर ही सन्तुष्ट होगी ! मेरे पिता को उसी ने मारा, मुझे भी वही मारना चाहता है—सँभल जाओ। वक्त के पहिले मुआफ़ी माँग कर अपने को बचा कर मेरे बचाने का प्रयत्न करो ! और कोई उपाय नहीं दीखता—क्या तुम एक आश्रय में पड़ी अबला को भी नहीं बचा सकते ? अपने लिए नहीं तो मेरे लिए माफ़ी माँगलो, प्रकाश !

प्रकाश—(स्वगत) क्या सुना ? क्या सुना ? कुछ भी नहीं सुना, जो सुना वह न सुनने लायक़ था ! कर्तव्य का शत्रु था और स्वदेशाभिमान का घातक था ! (सुनीता से) सुनीता ! अच्छा होता अगर तुम्हारी मुलाक़ात न होती ! तुम देश की दशा को भूल रही हो, अपने पिता की उस धधकती ज्वाला को भूल रही हो, जिसने तुम्हारे हृदय को जला डाला था ! लेकिन आज तुम्हारी दशा भूले हुए राही की तरह चक्कर काट रही है। तुमने अभी वज़ीर

की चालों को नहीं समझा है ! दमन की नीति को नहीं समझा है, और.........

जंगली—(स्वाभाविक ढंग से) बाक़ायदा है—मैंने समझा है, संयुक्त अक्षर-रहित हिन्दी की पहिली पुस्तक की तरह मैंने समझा है कि वज़ीर की कूटनीति प्रजा के ग़रीब दिलों को किस क़दर कुचल रही है ! आग सुलगती है, धुआँ उठता है, लेकिन किसी को जलाता नहीं !

मुनीता—(तेज़ी से) फिर तुम वज़ीर का साथ क्यों देते हो पहिरे-दार साहब ?

जंगली—(दुःखित मन से) मैं नहीं देता ! मेरी नौकरी देती है, मेरा पेट देता है, रोटी देती है !

नौकरी की झोंपड़ी में, जिस्म ये आफ़त-ज़दा !
बेक़ायदा भी है यहाँ पर हर तरह बा-क़ायदा !!

प्रकाश—(खुशी के स्वर में) ठीक कह रहे हो—प्रहरी ! रोटी का सवाल ही देश हित से पीछे हटा देता है ! कर्तव्य पथ से दूर कर, पेट के बनाए रास्ते पर ढकेलने लगता है !

जंगली—(रोष के साथ) गुलामी ! गुलामी ! शरीर पर ही नहीं, आत्मा तक पर गुलामी छा रही है ; कुछ नहीं कर सकता ! अपनी इच्छा से कुछ नहीं कर सकता ?—क्यों नहीं कर सकता ? क्या मैं मनुष्य नहीं हूँ-देशवासी नहीं हूँ ? फिर ? नहीं, अब पेट के लिए देश-द्रोही नहीं बनूँगा ! तुम देश के लिए मुसीबतें झेल रहे हो, और मैं पेट के लिए पाप कर रहा हूँ ! अधर्म कर रहा हूँ ! (पास जाकर) प्रकाश ! तुम देश का कल्याण करो, मैं चुपके से तुम्हें निकाले देता हूँ ! आओ जल्दी करो !

प्रकाश—(दृढ़ स्वर में) नहीं ! हरगिज़ नहीं ! मैं फ़रारी नहीं

बनता ! चोरों की तरह से नहीं भागता ! अपने एक देश-भाई के गले में फन्दा डाल कर स्वयं आजाद बनना नहीं चाहता ! ये भावना न जगाओ पहरेदार !

जंगली—(तीव्र स्वर से) मेरी चिन्ता न कीजिए ! मैं फाँसी पर चढ़ जाऊँगा मर जाऊँगा ! पर मुझे सन्तोष रहेगा कि मैंने अपने पापों का बाक़ायदा परिहार तो कर लिया ! आपकी जान मेरी जान से क़ीमती है, मुझे बाक़ायदा मर जाने दीजिए !

सुनीता—प्रकाश ! ये दूसरा उपाय है ! इसे ही स्वीकार करो ! नहीं ये मौक़ा भी चला जायेगा—तो मुश्किल होगी ?

प्रकाश—(तमक कर) मुश्किल ?

दिल है साफ़ और दिल में है सर्वशक्ति शाली भगवान !
उसे नहीं पर्वाह किसी की, मुश्किल है उसको आसान !!
सुनीता ! मुझे रसातल की ओर न ले जाओ !
जाओ अब भाग्य-निर्णय पर छोड़ दो मुझे !

सुनीता—(करुण स्वर में) प्रकाश ! हृदय को न ठुकराओ ! तुम्हीं बताओ कि तुम्हारी रिहाई के लिए मैं क्या करूँ ? किससे कहूँ ?

प्रकाश—(गंभीर होकर) मेरा कोई नहीं है, तुम किससे कहोगी—सुनीता !

सुनीता—(चकित होकर) तुम्हारा कोई नहीं है ? तुम देश भर के बन रहे हो, और तुम्हारा अपना कोई नहीं—कैसी बात है ? बोलो, बोलो, किसी को तो बताओ, कोई तो होगा !

प्रकाश—(गंभीर होकर) हाँ ! गुरुदेव हैं ! उनके पास जाओ, वे अगर कुछ कर सकेंगे, तो हो सकेगा ! पर सुनीता मेरे

लिये इतना कष्ट क्यों उठाती हो? मुझे देश की बलि-वेदी पर अपनी रक्त की धारें बहा देने दो!

जगाने दो उजेला अब मुझे निज आत्म-शक्ति का!
दिखाने दो मुझे संसार को बल देश भक्ति का!!

जंगली—(हर्षित होकर) धन्य हो! वीर-सन्तान धन्य हो!!

सुनीता—लेकिन कहाँ मिलेंगे—गुरुदेव! कोई ठिकाना?

प्रकाश—साधुओं का ठिकाना नहीं होता—सुनीता!

सुनीता—कोई चिन्ता नहीं!—

वियोगिन बन के निकलूँगी मुक़द्दर आज़माऊँगी!
हवा की भाँति भू-मण्डल का मैं चक्कर लगाऊँगी!!
कहीं भी होंगे वह होंगे मगर आकाश के नीचे—
ज़मीं के कौने-कौने से उन्हें मैं ढूँढ़ लाऊँगी!!

(जाती है—जंगली के साथ)

—पटाक्षेप—

दूसरा दृश्य

[स्थान दर्बार, महाराज अजितसिंह सिंहासन पर विराजे हैं, वज़ीर रणधीरसिंह एक काग़ज़ हाथ में लिए कुर्सी छोड़ कर खड़ा होता है]

अजित—(विह्वल-स्वर में) मानो, मानो, कहा मानो—वज़ीर साहब! उसे फाँसी न दिलवाओ! उसका कोई अपराध नहीं है! वह बे क़ुसूर है! मासूम है, रहम करो उस पर!

वज़ीर—(तेज़ आवाज़ में) लेकिन दुश्मन है! सल्तनत के लिए ख़तरा है! और प्रजा की शान्ति के लिए विद्रोह की आग है। उस पर रहम नहीं, ज़ुल्म करना चाहिए, सज़ा देनी चाहिए, मिटा देना चाहिए—उसे!

अजित०—(नर्मी से) मगर मैं उसे ऐसा नहीं देखता ! उसका मक़सद देश की भलाई है, उसकी निडरता देश की पुकार है। उसकी जिन्दगी देश की जिन्दादिली का सुबूत है ! मेरे दिल में उसके लिए रहम है ! मैं उसे मुहब्बत की नज़रों से देखता हूँ !

वज़ीर—(हँसकर) यह तुम्हारा भोलापन है, भूल है महाराज ! शत्रु को प्रेम करते हो, तलवार की धार का विश्वास करते हो, और ज़हर को मीठा समझकर अपनाते हो ! जहाँपनाह !—मेरा फर्ज़ है कि भूल को सुझाकर आपको राज्य-सत्ता की भलाई का रास्ता दिखाऊँ ! ज़िद न कीजिए—(काग़ज़ बढ़ाता है) दस्तख़त कीजिए ! अगर आप ऐसा नहीं करते तो—उसका मतलब राज्य नष्ट करना होगा, आपकी दस्तन्दाज़ी देश में बग़ावत भड़काकर ही छोड़ेगी और उसके ज़िम्मेदार आप होंगे !

अजित०—(तेज़ स्वर में) न डराओ, न डराओ ! देश की खौफ़-नाक तस्वीर खींचकर मुझे न डराओ ! मुझे बिल्कुल पागल न समझो, वज़ीर साहब ! याद रखो—मैं शुरू से ही ऐसा नहीं था ! तुम्हारी ही तरह मैं भी होशियार अक्लमन्द और दिलावर था। लेकिन मेरे राजकुमार जयसेन ने मुझे पागल बना दिया ! जिस दिन से वह मेरी आँखों से ओझल हुआ, मैं पागल बन गया ! सारा राज-काज मैंने तुम्हें सौंप दिया ! और तुमने मेरे कमज़ोर दिमाग़ को शराब की आफ़त में फँसाकर और भी नाक़ाबिल बना दिया ! और अब मेरे पागल-पन से एक बे कुसूर की हत्या करना चाहते हो ? यह न हो सकेगी !

सुनने दो मुझको ज़रा, शुद्ध-हृदय संलाप !
अधिक न अब सिर पर रखो, अपराधों का पाप !!

वजीर—आश्चर्य ! आप उपकार को अपकार मान रहे हैं ! यह सरासर अहसान फ़रामोशी है ! याद कीजिए–महाराज ! जब पुत्र-वियोग में आप दिल और दिमाग़ दोनों से पागल होने जा रहे थे—तब इस वफ़ादार ख़ाकसार ने आपको—सदमे के जबर्दस्त धक्के से बचाने के लिए—बतौर दवा के शराब पिलाना शुरू किया था ! मेरा ख़याल है, शराब ने अब तक आपको पागल होने से बचाया है ! और ऐसी हालत में, जब कि आप रंजीदा हों शराब पीना आपके लिए मुनासिब बात है । (काग़ज़ रखकर, जाम हाथ में लेकर) लीजिए, दिल की रंजीदगी को बर्बाद कीजिए ।

नियामत है ये दुनिया की फली फूली दुआ है ये !
हज़ारों रंजोग़म को दूर करने की दवा है ये !!

अजित०—(जाम की ओर देखते हुए) शराब ?······शराब ?
न समझो इसको तुम हाला, असल में ये हलाहल है !
वो तनका घात करता है, ये करती मन को पागल है !!
जो पीता है इसे वह फ़र्ज़ अपना भूल जाता है—
मज़ा हैवानियत के कारनामों में बताता है !!

वज़ीर साहब ! रहने दो इस दवा के प्याले को ! मेरा मर्ज़ बग़ैर दवा के भी आराम हो सकता है ! मुझे इन्सान बनने दो ! न पिलाओ, न पिलाओ इस मादकता के मीठे जहर को, ये मेरा सर्वनाश कर देगा ! मुझे तबाह कर डालेगा !

वज़ीर—(मीठे स्वर में) तबाह कर डालेगा ? नहीं, आपकी

रंजीदा तबियत को हरा-भरा बनायेगा। कहा मानिए, पीजिए—आपकी तन्दुरुस्ती इसी पर मुनहसर है, इसे न छोड़िए! नहीं, आपका होने वाला अनिष्ट मुझसे न देखा जायगा। मैं आपको बुरी दशा में नहीं देख सकता-जहाँपनाह! लीजिए लीजिए, ये कड़ुवा-घूँट आपके हृदय में मिश्री घोल देगा! इसे न ठुकराइये।

(जाम देता है)

अजित०—(जाम लेते हुए) तुम्हारी यही इच्छा है—तो लाओ! मैं तुम्हारी ही राय पर चलूँगा। (ओठों पर लगाते हुए) उतर जा, उतर जा—ओ कड़ुवे-घूँट! मेरे मर्ज़ की दवा! मेरे गले के नीचे उतर जा! मगर मेरे हृदय में न उतरना! उसे बेहोश न करना! (पीता है)

वज़ीर—(स्वगत) उतर पड़ी! उतर पड़ी! जगे हुए को सुलाने वाली, मेरी मुरादों की दुनिया बसाने वाली—रसधारा, कर्तव्य और बुद्धि की समरभूमि में उतर पड़ी!

अब कौनसी ताक़त है जो कर लेगी सामना!
जो आएगी मुकाबिले हो जायगी फ़ना!!

अजित—(पीकर) ओफ़!

प्राणों में बजने लगी एक नई झंकार!
बदल उठी मेरी नज़र या बदला संसार!!

रगों में खून दौड़ने लगा! आँखों में सुर्खी के डोरे तनने लगे! हृदय में एक नया संघर्ष, नया तूफान सा हिलोरें लेने लगा! यह क्या है, वज़ीर साहब? क्या मेरा मर्ज़ सेहत हो रहा है, या मेरी विचार-शक्ति का ख़ात्मा? बताओ तो—यह क्या हो रहा है?

वज़ीर—(अदब से झुककर) घबराइए नहीं—जहाँपनाह! आप झंझटों की दुनिया को छोड़ते हुए, ऐशो-आराम की

दुनिया में तशरीफ़ ले जा रहे हैं ! लीजिए थोड़ी और पीजिए—ताकि सारे रंजोग़म आपका पीछा छोड़ दें !

अजित०—(भोलेपन के साथ) अच्छा यह बात है, तो लाओ एक जाम और !

वज़ीर—(जाम देते हुए) लीजिए !—

ये वह शै है निराली और अपनी जिसकी हस्ती है !
ये ताक़त है, जवाँमर्दी है, हिम्मत तन्दुरुस्ती है !!
न मज़हब की गुलामी है, न पाबन्दी का जंजीरें—
ये उस बस्ती की रानी है, जहाँ हर चीज़ सस्ती है !!

अजित०—(पीते हुए) आओ रानी ! मैं तुम्हारा सत्कार करूँगा, हृदय के सिंहासन पर बिठलाऊँगा। आओ...!

वज़ीर—(और जाम देता है) लीजिए !...जहाँपनाह ! राज्य की बागडोर आपने मेरे हाथ में दी है, मेरा फ़र्ज़ है कि उसे मैं ठीक तरह से चलाऊँ ! उसमें दूसरे की दस्तन्दाज़ी ख़तरा बन सकती है ! इसलिए मुनासिब है कि आप (काग़ज़ हाथ में लेता है) इस पर दस्तख़त करदें !

अजित०—(भोलेपन से) क्या है बेगुनाह प्रकाश का फाँसी-पत्र उसे न मारो वज़ीर ! उसने कुछ नहीं बिगाड़ा ! वह निर्दोष है।

वज़ीर—(कड़ी आवाज़ में) वह निर्दोष है ? जिसने देश में बगावत की आग भड़कादी है, भोले-भालों की हिम्मत बढ़ा कर राज्य का दुश्मन बनाया है, और जो स्वयं सरे दर्बार में सल्तनत की तौहीन करने से बाज़ नहीं आया—वह निर्दोष है ? जहाँपनाह ! राज-काज में नहीं समझते, तब उस बीच में न पड़िए ! मैं कह रहा हूँ—

दस्तखत कीजिए। इसी में भलाई है, इसी में कल्याण है !

अजित—(भोलेपन से) एक बे-क़सूर की हत्या करने में भलाई है—अपना कल्याण है ?

वजीर—(गंभीर स्वर में) हाँ ! लेकिन यह हत्या नहीं है, अनर्थों की जड़ को कुरेद कर फेंकना है, जलाने वाली आग को बर्बाद करना है ! आप भूलते हैं—जो उसे हत्या कहते हैं महाराज !

अजित—(भोलेपन में) मैं भूलता हूँ ?—

वजीर—(दृढ़स्वर में) हाँ ! और आपकी भूल सुझाना ही मेरा काम है ! मेरे बतलाए हुए रास्ते से हट कर भूलों के समुन्दर की ओर न बढ़िए ! लीजिए दस्तखत कीजिए। (क़लम हाथ में देता है, काग़ज़ सामने रखता है।)

अजित—(भोलेपन के साथ) वजीर ! दस्तखत नहीं, कत्ल करा रहे हो, करालो—तुम्हारी यही इच्छा है, तो यही सही ! (महाराज दस्तखत करते हैं, वजीर 'हुक्मनामा' जेब में रख कर, जाम भर कर देता है।)

वजीर—(ख़ुश होते हुए) बुझा डालिए—इन ठन्डे छींटों से दिल की तपन को बुझा डालिए महाराज ! (महाराज पीते हैं)

—पटाक्षेप—

——

तीसरा-दृश्य

[स्थान—बध-स्थल। प्रकाश फाँसी के तख्ते पर खड़ा हुआ है, हाथ-पैर रस्सी से बँधे हैं। सिर पर फाँसी का टोपा है—गले में फन्दा, (नोट—फन्दा दिखलाने के लिए, पीछे गर्दन के कमीज के-ढिंगने से डोरी ले जानी चाहिए, आगे भी डोरी दीखे) समीप ही जल्लाद खड़ा है। एक ओर महाराज और वजीर खड़े हैं। पीछे जंगली पहरे दार हाथ में पिस्तौल लिए]

वज़ीर—अब भी समय है, एक बार फिर सोचो !

प्रकाश—(गंभीर स्वर में) सोच लिया !

वज़ीर—देखो, नाहक़ जान गँवाने से कोई नतीजा हासिल न होगा ! एक मजबूत ताक़त के आगे इस तरह की दिलेरी दिखाना, महज़ बेवकूफ़ी है !

प्रकाश—(उपेक्षा से) बेवकूफ़ी ? जिसे आप बेवकूफी कहते हैं, मैं उसे अक्लमन्दी समझता हूँ। मिट्टी का कमजोर घड़ा ताक़तवर पानी को क़ैद कर लेता है। नाचीज़ तृणों से बनी हुई रस्सी, कठोर पत्थर को घिस डालती है। हाथ में न पकड़ी जाने वाली ज्वाला, फ़ौलाद को पानी बना देती है ! उसकी मजबूत-ताक़त ज्वाला के जलते हुए हृदय की सांसों के सामने गल जाती है।

वज़ीर—(तमककर) गल जाती है ?—लेकिन मैं उसे गला देने का मौक़ा न मिलने के पहिले ही नष्ट कर दूँगा। याद रखो मैं इतना बेवकूफ़ नहीं हूँ—मैं आग से खेलता हूँ लेकिन आग मुझे अपना खिलौना नहीं बना सकती।

प्रकाश—(सरलता से) घमण्डी न बनो—वजीर साहब ! प्रभात का संसार की आँखें बन्द कर देने वाला अहंकारी

सूरज—संध्या को अस्ताचल की गोद में मुँह छिपाने के लिए व्यग्र नज़र आता है। कमान की ताक़त पर अपने को ऊँचा पहुँचाने वाला—घमण्डी बाण, नाक के बल ज़मीन पर गिरता दिखाई देता है। तुम्हारा अहंकार देश के हाहाकार के मुक़ाबिले में खड़ा रहेगा, यह असम्भव है।

बज़ीर—असम्भव है। समझ गया कि तुम्हारा जीता-जागता नज़र आना अब असम्भव है। मौत की विनाशकारी-घड़ी ने तुम्हारे जीवन-लोभ को ढक दिया है! देखो, एक बार फिर सोचो, आख़िरी मौक़ा दे रहा हूँ—अगर अपने हठ को छोड़दो, देश की शान्ति को क़ायम रखने में मदद दो तो तुम्हारी जाँ-बख़्शी हो सकती है। तुम सही सलामत वापिस लौट सकते हो। बोलो…?—

प्रकाश—(कड़ककर) चुप रहो! मेरे देश-प्रेम को—मेरी बलिदानी-भावना को—प्रलोभनों की आग में पिघलाने की चेष्टा न करो।—

वह फूल नहीं है कण्टक है जिसमें सौरभ का सार नहीं!
मत कहो उसे वीणा हरगिज़ जिसके भीतर झनकार नहीं!!
वह जीवित भी है मरा हुआ करता जो पर—उपकार नहीं!
वह हृदय नहीं है पत्थर है जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं!!

बज़ीर—(ज़ोर से) न भूल, न भूल! ओ हठी विद्रोही! ये देश प्रेम की रट तुझे मौत के घाट उतार कर रहेगी!

प्रकाश—(जोश के साथ) पर्वाह नहीं!—

पर्वाह नहीं है मरने की गर जीता मेरा वतन रहे!
मैं शान्ति उपासक बना रहूँ सिर पर हैवानी दमन रहे!!

मैं रहूँ, न रहूँ मेरा क्या है यह तन स्वदेश की मिट्टी है—
पर्वाह है तो बस इतनी है—सारे स्वदेश में अमन रहे !!

वज़ीर—ख़ामोश ! अमन का गीत गाता है, और देश में हाहाकार को नींव जमाता हुआ मौत के रास्ते पर लेटता है—धोखेबाज कहीं का !

प्रकाश—(तमक कर) मैं धोखेबाज़ ?···

धोखा तू दे रहा है परवरदिगार को !
ठुकराके दर्दमन्द प्रजा की पुकार को !!
छोटों के बल से आज तू दुनिया में बड़ा है !
ये राज्य प्रजा ही के सहारे पै खड़ा है !!
तू .ज़ुल्मो सितम से हमें बरबाद करेगा !
यह .ज़ुल्मो सितम ही हमें आज़ाद करेगा !!

अजित—(स्वगत) सच कह रहे हो—प्रजा पुत्र ! ओफ़ ! आज यह राजा कहलाने वाला—दूसरे की इच्छाओं पर चलने वाला—बेवकूफ़ कुछ नहीं कर सकता ! काश ! अगर आज जयसेन—मेरा प्यारा बेटा जयसेन होता ! तो······?—

वतन अमनोअमन होता, समय होता इबादत का !
न मौक़ा ही जलालत का न दिन आता क़यामत का !!

वज़ीर—(कड़े स्वर में) देखता हूँ आज़ादी के दीवाने ! प्रजा के सहारे पर राजा है या राजा की परवरिश पर प्रजा है ? अहंकारी ! देखता नहीं—राजा की एक पतली-सी डोरी पर तेरी जान अटकी हुई है।

ग़ौर कर अपने ख़याले-ख़ाम पर !
और ना-समझी के इस अन्जाम पर !!
जान से बढ़कर जहाँ में कुछ नहीं—
जान क्यों देता वतन के नाम पर !!

प्रकाश—तू नहीं समझ सकता कि मैं वतन पर जान क्यों देता हूँ ! इसलिये कि—

जान से बढ़कर वतन है या वतन ही जान है !
जब वतन पर आ पड़ी तो जान की क्या शान है !!
जो वतन की आन पर देता न अपनी जान को—
वह अगर इन्सान भी है तो निरा हैवान है !!

वज़ीर—(शान्ति से) समझ गया ! समझ गया कि मौत के सिपहसालारों ने दिमाग़ पर फ़तह पाली है। अब तुझे कोई बचा नहीं सकता !

मौत के बादल हैं अब सिर पर सवार !
मरने वाले जल्द होजा होशियार !!

प्रकाश—(ज़ोर से) होशियार हूँ !—

लिखाले नाम तू अपना सितमगर अक्लमन्दों में !
बड़ा दो दिन को तू बनले यहाँ दुनिया के बन्दों में !!
बहा दे ख़ून तू मेरा मिटा दे जिस्म की हस्ती—
न आयेगी ये आज़ादी मगर फाँसी के फन्दों में !!

वज़ीर—(ज़ोर से हँसकर)—

'बात हैरत की मेरे सामने आई ये नई !
रस्सी जलकर के हुई ख़ाक पर ऐंठन न गई !!'

प्रकाश—तू समझले जो कुछ समझ सके, आखिर परमेश्वर समझेगा !
अन्याय का बल पूरा होगा तब वह डटकर बदला लेगा !!

वज़ीर—(ज़ोर से हँसने के बाद) कौन ईश्वर ? कौन परमेश्वर ? तेरा ईश्वर मैं हूँ—तेरी आयु मेरी (कलाई की घड़ी में देखते हुए) इस घड़ी में बन्द है !

जंगली—(स्वगत)—लड़ते हैं बेसबब ही ये अपनी टेक है !
लड़ता नहीं किसी से जो दिल का नेक है !!

तुम इनको अपना समझो, उन्हें गैर समझलो-
पाबन्द सब उसी के प्रभू सबका एक है !!

वज़ीर—(ज़ोर से) लगादो फाँसी ! एक—दो—ती.........!

(जल्लाद तैयार होता है, उसी वक्त एक ओर से सुधा वेश्या कुछ काग़ज़ लिये आती है ! दूसरी ओर से सुनीता के साथ गुरुदेव और प्रकाश के सैनिक-साथी आते हैं ।)

गुरुदेव और सुधा—(एक साथ ज़ोर से) ठहरो !...

(जल्लाद दूर हटकर खड़ा होता है)

सुधा—(वज़ीर की ओर उँगली दिखाते हुए) सल्तनत के सबसे बड़े दुश्मन की नापाक़ मर्ज़ी पर एक बे-गुनाह का ख़ून न बहाइये—जहाँपनाह !

गुरुदेव—(कड़ककर) धूर्त, मक्कार दग़ाबाज़ वज़ीर की झूँठी और मीठी चालों में फँसकर अपने प्यारे पुत्र की हत्या न कराइये—महाराज !

अजित—(ताज्जुब मे) हैंय ! यह क्या ? इसका सुबूत ?

सुधा—सुबूत मैं दूंगी ! असल अपराधी को फाँसी देने के लिये तैयार होइये और इस बे-क़ुसूर नौजवान को नीचे उतारिये।

अजित—(जंगली की ओर) प्रकाश को तख़्ते से उतार दो !

जंगली—(अदब से) बाक़ायदा—जो हुक्म !

(जंगली प्रकाश की फाँसी खोलता है । उसी वक्त—)

वज़ीर—(काग़ज़ हाथ में लेकर) क्या करता है ? यह देख, महाराज का हुक्मनामा !

जंगली—बाक़ायदा है, सरकार ! मगर महाराज के मुँह से निकले

हुए हुक्म के आगे—काग़ज़ी हुक्म—मुझ बे-पढ़े के लिये बेकार है !

बज़ीर—(क्रोध से पिस्तौल लेते हुए) अच्छा ? मेरी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ कोई जिन्दा नहीं रह सकता ! फाँसी की मौत से बचा सकते हो, लेकिन पिस्तौल की गोली नहीं रोक सकते !

(प्रकाश नीचे आता है। उसी वक्त वज़ीर गोली मारता है। गोली लगने के पहिले ही फटेहाल-बेकार युवक प्रकाश के सामने आ खड़ा होता है—गोली उसकी बाँह में लगती है—ख़ून से लथपथ वह गिर जाता है)

अजित—(चिल्लाकर) गिरफ़्तार करो ! ख़ूनी को कैद करो !

(प्रकाश के साथी सैनिक और जंगली मिलकर बज़ीर को बाँध लेते हैं, पिस्तौल छीन ली जाती है)

प्रकाश—(बेकार युवक को उठाते हुए) कौन ? बेकार-युवक ! भाई, तुमने मेरी जान बचाई—अपनी जान की क़ुर्बानी देकर ?

बेकार—(नम्रता से) मैंने कुछ नहीं किया !

जो कुछ किया है सिर्फ़ वह कहने का नाम है !
भाई की मदद आना भाई का काम है !!

प्रकाश—(फटी कमीज़ को छूते हुए) क्या वह पाँच हज़ार रुपये भी तुम्हारी हालत में तब्दीली नहीं ला सके ?

बेकार—(गम्भीरता से) यह बात नहीं ! उन रुपयों से मैंने देश की भलाई के लिये एक 'बेकार-आश्रम' खोल दिया है, जिससे हाहाकार की ज्वाला शान्त हो सके !

प्रकाश—(हर्षित होकर) धन्य हो मेरे देशवासी ! तुम ग़रीबी में भी भारतीयता को नहीं भूले—तुम धन्य हो ! (अपने एक सैनिक से) ले जाओ, इन्हें आरोग्य करो !

(एक सैनिक के साथ बेकार-युवक जाता है)

सुधा—(एक फोटो दिखाती है) पहचानिये, महाराज यह कौन है ?

अजित—(देखते हुए हैरत से) निरंजन ! मेरे राज्य का दर्बान ! जो बेचारा इस ख़ूनी वज़ीर की गोली का निशाना बना, जिसे मरे एक अर्सा गुज़र गया !

सुधा—लेकिन आप यह नहीं जानते—उसे वज़ीर ने क्यों मारा ? (काग़ज़ हाथ में देती है) यह पढ़िये !

अजित—(काग़ज़ पढ़ता है) 'मेरे दोस्त निरंजन ! मैं तहरीर किये देता हूँ कि बीस हज़ार रुपये तुम्हें उस वक्त और दूंगा जब तुम युवराज जयसेन को किसी भी तरीक़े से ख़त्म कर दोगे ! और मुझे राज्य की कामयाबी में मदद देते रहोगे। तुम्हारा—वज़ीर रणधीरसिंह !' (पढ़ने के बाद वज़ीर की ओर) हँय ! राजकुमार को इसी दुष्ट ने राज्य हड़पने के लिये मरवा डाला था ?

सुधा—(दृढ़ता से) हाँ ! और पाप को छिपाये रखने के लिये—इस बेईमान ने भोले निरंजन को भी मार डाला ! इसके बाद राज्य के सच्चे हमदर्द जागीरदार को भी मार डाला। इसी वजह से कि उन्हें इस पाप का पता चल गया था ! वे इसके रास्ते को ठोकर बन गये थे !

सुनीता—(दुःखभरे स्वर में) आह ! मेरे पिताजी को इसीलिए मारा था ? नराधम, नीच ! एक पाप छिपाने के लिए कितने पाप किए तूने ?

वज़ीर—(सुधा से) ये पत्र तेरे पास किस तरह आया चाण्डालिन ?

सुधा—(तेज़ी से) जिस तरह तूने मुझे महारानी बनाने का प्रलोभन दिया। उसी तरह मैंने तुझे मुट्ठी में रखने के लिये—निरंजन को उल्लू बनाकर छीन लिया !

अजित—(ताज्जुब से) तो जयसेन की हत्या से और प्रकाश से क्या सम्बन्ध ? इस पहेली का क्या मतलब ?

गुरुदेव—मतलब मैं समझाता हूँ—महाराज ! मेरा साधु-आश्रम गंगा के पवित्र किनारे पर बसा हुआ है ! एक दिन मैं अखण्ड-समाधि में लीन होकर बैठा था ! सहसा परोपकार की महत्भावना ने मेरी समाधि को भंग किया। मैंने देखा कि एक बालक-शरीर बहता चला आ रहा है ! उसे निकाला। उपचार से चैतन्य किया। फिर आश्रम को झौंपड़ी में लाया। उस मनोहर-बालक की दिव्य-ज्योति से अँधेरी झौंपड़ी प्रकाशमान हो उठी—तो मैंने बालक का नाम 'प्रकाश' रक्खा। प्राणों की तरह पोषण कर बड़ा किया।

अजित—(ताज्जुब से) हाँ ! कहो, कहो—प्रकाश ही राजकुमार जयसेन है, इसका सुबूत ?

गुरुदेव—इसका सुबूत स्वयं प्रकाश है ! प्रकाश इधर आओ—(प्रकाश समीप आता है, गुरुदेव दाहिने हाथ के कपड़े हटाकर भुजा पर बँधे तावीज को खोलकर दिखाते हैं) देखिये शरीर पर राज-चिन्ह और स्वर्ण-तावीज !

अजित—(हर्षित होकर) ठीक है ! ठीक है !! यह मेरा ही अलंकार है ! स्वर्णाक्षरों में लिखा हुआ है 'राजकुमार जयसेन !' (विह्वल स्वर में) मेरा राजकुमार ! मेरा प्यारा राजकुमार ! मेरा बेटा······!

वजीर—(घबड़ाकर) हैं ! जयसेन जिन्दा है ?

(सुनीता मुस्कराती है, सब प्रसन्न हैं ! महाराज प्रकाश को छाती से लगाते हैं)

प्रकाश—पिताजी ! पिताजी !!···(चरणों में झुकता है)

— पटाक्षेप —

चौथा-दृश्य

[स्थान—दर्बार ! महाराज अजितसिंह सिंहासन पर हैं ! समीप ही एक ओर प्रकाश है, दूसरी ओर सुनीता। उच्चासन पर गुरुदेव बैठे हैं ! प्रकाश के सैनिक-साथी खड़े हुए हैं, वजीर रणधीरसिंह जंजीरों में बँधे खड़े हैं। जंगली पिस्तौल लिए उनके पहरे पर तैनात हैं।]

जंगली—(ख़ुशी से)—

वतन में छाया अमन, हर ओर से आती सदा !
टूटकर बेक़ायदा अब बन गया बाक़ायदा !!

गुरुदेव—अहा ! कैसा धन्य दिन है ! देश की आवाज़ आज आनन्द-ध्वनि बन रही है ! घर-घर में सन्तोष की साँस ली जा रही है। आज विजय-दिन है—अत्याचारों की दानवी-लीला समाप्त हो चुकी है !

तन चुकी है चाँदनी अब देश के आकाश पर !
हो रहा अधिकार क्रमशः कीर्ति के इतिहास पर !!

अजित०—(उठकर) आज इस पवित्र दिन के सुनहरे प्रकाश मे भी अपने कर्तव्य से उऋण होकर प्रभु-भजन का आनन्द-भोग करना चाहता हूँ—गुरुदेव !

गुरु०—(खड़े होकर) श्रेष्ठ विचार है राजन !

[महाराज थाल में रखे हुए राज-मुकुट, तथा मंगल द्रव्यों को उठाकर प्रकाश के राजतिलक करना चाहते हैं, प्रकाश उठता है—सुनीता भी खड़ी हो जाती है]

प्रकाश—(हाथ उठाकर) ठहरिए पिता जी !

अजित०—(सब एकटक देखने लगते हैं) क्यों ?

प्रकाश—(गम्भीर स्वर में) मैंने प्रतिज्ञा की है, जब तक बेक़ुसूर जागीरदार के .खूनी से बदला न लूँगा, तब तक माथे पर त्रिपुण्ड न लगाऊँगा। इसलिए—होने वाले नरेश की हैसियत से मैं वज़ीर रणधीरसिंह को सज़ा देता हूँ कि उसे लोहे के कठहरे में बन्द कर शहर के आबादी से भरे-पूरे चौराहे पर रख दिया जाए! जिससे लोग नेकी और बदी का सबक़ सीख सकें।

जान लें पापी को वह और पाप के अंजाम को!
दूर से ही त्याग दें जिससे बदी के काम को!!

वज़ीर—(गिड़गिड़ाकर) रहम करो! रहम करो! इस ज़लालत की मौत न मारो! मुझे गोली मारदो, मुझे फाँसी दे दो! मुझे क़त्ल कर दो—पर प्रजा के आगे ज़लील न करो।

प्रकाश—चुप रहो, मैं तुम्हारे नापाक़ .खून से अपने हाथ नहीं रँग सकता!

वज़ीर—(कड़ककर) नहीं रँग सकते?—तो मैं भी ज़लालत की मौत नहीं मरूँगा!

(वज़ीर झपट कर जंगली के हाथ से पिस्तौल छीन कर अपने कलेजे में गोली मार लेता है। .खून का फ़ुहारा-सा चलता है—मर जाता है। सब देखते हैं)

सब—(एक साथ) मर गया? उसी के पापों ने उसे मार डाला।

जंगली—
तक़दीर के इन्साफ़ में कुछ फेर नहीं है!
है देर तो ज़रूर पर अन्धेर नहीं है!!

अजित०—(उपेक्षा से) जाने दो, मेरा दामन पाक़ हुआ। प्रकाश तुम अपनी प्रजा के स्वामी बनो। मुझे अपने हक़ से अदा होने दो।

[महाराज राजतिलक कर, मुकुट सिर पर रखते हैं, सब लोग चिल्लाते हैं ।

सब—महाराज की जय हो ! [महाराज सुनीता को और प्रकाश को सिंहासन पर बैठाते हुए पुष्प वर्षा करते हैं ।]

प्रकाश—[गुरुदेव और महाराज को सिर झुकाता है, फिर जंगली से—सच्चे राज्य भक्त ! मैं तुम्हें वज़ीर का पद देता हूँ !] (तलवार भेंट करता है, जंगली सिर झुकाकर लेता है)

गुरुदेव—(हर्षित होकर) ओ प्रकृति की गोद में सोने वाले जीव-धारियो ! ख़ुशी से नाच उठो ! आज हिंसा की छाती के ऊपर अहिंसा नृत्य कर रही है । चारों ओर अहिंसा की विजय-दुन्दुभी कानों को अमृतमयी बना रही है ।

हृदय अनुभूतियों की विश्व-नभ पर क्रान्ति-सी छाई !
दुखद हिंसा की ज्वाला पर अहिंसा ने विजय पाई !!
मिलो भाई से भाई और 'भगवत्' प्रेम संचय हो !
सदा ही विश्व-मण्डल में अहिंसा-धर्म की जय हो !!

सब—अहिंसा धर्म की जय हो !

(आकाश से पुष्पों की वर्षा होती है)

समाप्त

अभिनायकों की सुविधा के लिए—

सीन—

दर्बार, श्मशान-भूमि, वेश्या का घर, तपोवन, सुनीता का घर, राजपथ, बज़ीर का कमरा, जंगल, जेल, वध-स्थल, और अयोध्या, चित्तौड़ !

सीनरियाँ—

चिता, बोर्ड, पर्दा फटना राम राज्य, चित्तौड़-राज्य, काले-काले बादल, बिजली, मेह, जंगल, जेल, फाँसी का तख्ता और साधु आश्रम की झोंपड़ी !

ड्रेसिंग

[प्रमुख-पात्रों के लिये विशेष रूप से]

१—वज़ीर—ब्रिजिस, बूट, बन्द कॉलर का कोट और साफा हाथ में चाबुक ! कोट, पैन्ट, टाई और साफ़ा ! कभी चूड़ीदार पजामा कुर्ता !

२—प्रकाश—गेरुआ वस्त्र ! नेकर खाकी कमीज़ और साफ़ा ! खद्दर का सफेद कुर्ता, जवाहरकट-वास्कट, टोपी, धोती चप्पल !

३—महाराज अजितसिंह—राज-सी पोशाक

४—जंगली—सिपाहिआना ड्रेस, और कभी सादा लिबास !

५—गुरुदेव—सफेद चुगा, सफ़ेद लम्बी दाढ़ी, सफेद साफी और लाठी ! गले में माला !

बाकी सब के यथा साध्य—

क्रांति का नया दूत

'शाला' 'बाला' को परिपाटी पर भीषण प्रहार !

आपने 'मधुशाला' 'मधुबाला' 'नवबाला' और 'वधशाला' पढ़ देखीं ! अब जरा इस सामाजिक-मनोरंजन को भी पढ़ देखिए। गारण्टी है कि इसे आप पसन्द करेंगे। श्री 'भगवत' जी जैन की यह एक नवीन और मौलिक कृति है।

नाम है—

घरवाली

जिस उद्देश्य से विधाता ने इसे संसार को दिया है। उसी विनोद की दृष्टि से लेखक इसे आपके आगे पेश करता है।

❀ घरवाली ❀

नाटक है, उपन्यास है, कविता है, कहानी है, निबन्ध है। सब कुछ है। और कुछ भी नहीं है। यह वह है जिसे बग़ैर पढ़े आप नहीं बता सकते कि—क्या है ? एक कापी मँगाने के लिए तैयार रहिये।

शीघ्र ही छपने जा रही है !

व्यवस्थापक—

भगवत्-भवन एत्मादपुर, आगरा।